प्रवचन का अमृत

-: लेखक :-

परम पूज्य आचार्यदेव श्रीमद् विजय

रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.

प्रवचन का अमृत

लेखक

परम शासन प्रभावक, व्याख्यान वाचस्पति
दीक्षा युग प्रवर्तक पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय
रामचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. तेजस्वी शिष्यरत्न बीसवीं सदी
के महान् योगी, भावाचार्य तुल्य पूज्यपाद पंन्यासप्रवर
श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य के
कृपापात्र चरम शिष्यरत्न, मरुधररत्न, गोड़वाड़ के गौरव,
जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर पूज्य आचार्यदेव
श्रीमद् विजय **रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.**

262

प्रकाशन

दिव्य सन्देश प्रकाशन
C/o. सुरेन्द्र जैन, Office No. 304, 3rd Floor,
बे.व्यु. बिल्डींग, विंग-ईस्ट बे,
डॉ.एम.बी. वेलकर स्ट्रीट, कालबादेवी, मुंबई-400 002.
Cell 84 84 84 84 51 (only whatsapp)

आवृत्ति : प्रथम • **मूल्य :** 200/- रुपये • **प्रतियाँ :** 750
विमोचन तिथि : 27-12-2025
विमोचन स्थल : आराधना भवन, सादडी, (राज.)
• **Website :** Divyasandesh.online

आजीवन सदस्य योजना

आजीवन सदस्यता शुल्क - 4000/- रु.

• आप जैन धर्म के रहस्य, जैन इतिहास, जैन तत्त्वज्ञान, जैन आचार मार्ग, प्रेरणादायी कथाएँ आदि का अध्ययन करना चाहते हों तो आज ही आप **दिव्य संदेश प्रकाशन** मुम्बई की आजीवन सदस्यता प्राप्त कर लें। सदस्य बनते ही अध्यात्मयोगी निःस्पृह शिरोमणि स्व. पूज्यपाद पंन्यासप्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्यश्री** एवं उन्हीं के चरम शिष्यरत्न प्रवचन प्रभावक परम पूज्य ***आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.*** सा. द्वारा लिखित उपलब्ध 7 पुस्तकें दी जाएंगी और **अर्हद् दिव्य संदेश** मासिक तथा भविष्य में हिन्दी भाषा में प्रकाशित पुस्तकें (Open Book Exam साधु–साध्वी उपयोगी पुस्तकें एवं पुनः मुद्रित पुस्तकों को छोड़कर) घर बैठे प्राप्त होगी। आप आजीवन सदस्यता शुल्क मुंबई या बैंगलोर के पते पर दिव्य संदेश प्रकाशन-मुंबई के नाम से चैक व ड्राफ्ट से भेजें।

प्राप्ति स्थान

1. चेतन हसमुखलालजी मेहता
भायंदर (M.S.)
M. 9867058940

2. प्रवीण गुरुजी
C/o. श्री आत्म कमल लब्धिसूरि जैन पुस्तकालय
श्री आदिनाथ जैन टेंपल,
चिकपेठ, बेंगलोर-560 053.
M. 9036810930

3. चंदन एजेन्सी
607, चीरा बाजार,
मुंबई-400 002.
M.9820303451

आजीवन सदस्यता शुल्क
Rs. 4000/- भिजवाने का पता एवं पुस्तक-प्राप्ति-स्थान :

(1) दिव्य संदेश प्रकाशन
C/o. सुरेन्द्र जैन, Office No. 304, 3rd Floor, बे व्यु बिल्डिंग, विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट, कालबादेवी, मुंबई-400 002. Mobile : 84 84 84 84 51 (only whatsapp)

(2) प्रकाश बड़ोल्ला,
52, 3rd Cross, शंकरमट रोड, शंकरपुरा,
बैंगलोर-560 004. M. 8971230600

प्रकाशक की कलम से...

नमस्कार महामंत्र के बेजोड साधक, बीसवीं सदी के महान् योगी निःस्पृह शिरोमणि पूज्यपाद पंन्यास प्रवर **श्री भद्रंकरविजयजी गणिवर्य** के कृपापात्र चरम शिष्यरत्न मरुधर रत्न, गोड़वाड़ के गौरव, जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर **पूज्यपाद आचार्यदेव श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.** संयम जीवन के स्वर्णिम वर्ष में मंगल प्रवेश की अनुमोदनार्थ उन्हीं के द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित **262वीं पुस्तक 'प्रवचन का अमृत'** का प्रकाशन करते हुए हमें अत्यंत ही हर्ष हो रहा है।

पिछले 45 वर्षों से पूज्यश्री की प्रवचन गंगा बह रही है, जिसमें आत्मस्नान कर अनेक पतित आत्माएँ भी पावन बनी है।

प्रवचन दरम्यान पूज्यश्रीने शिष्यरत्न **पू.मु. श्री स्थूलभद्रविजयजी म.सा.** उन प्रवचन बिंदुओं के शब्द देह देते रहे है। ये प्रवचन मोती प्रतिमास **अर्हद् दिव्य संदेश मासिक** में निरंतर प्रकाशित हो रहे है।

पूज्यश्री के संयम सुवर्ण वर्ष में पूज्यश्री द्वारा हिन्दी भाषा में आलेखित अनेक पुस्तकों का प्रकाशन हो रहा है ।

प्रस्तुत पुस्तक में Short & Sweet में उन प्रवचन बिंदुओं का संग्रह किया गया हैं, जो आत्मा के पोषण के लिए अमृत के पान समान है ।

विष के कटोरे पीने के बजाय अमृत की दो बुंदे ही बस है ।

पूज्य आचार्य भगवंत के प्रवचन अत्यंत ही सरल सुगम होते है ।

बस, इन प्रवचन बिंदुओं का अमृत पान कर सभी आत्माएँ प्रभु के बताए मार्ग पर आरुढ बने, इसी मंगल कामना के साथ...

- दीक्षा लेने के साथ चार इन्द्रियों पर स्वतः अंकुश आ जाता है, परंतु रसनेन्द्रिय को जीतने के लिए तो स्वयं को पुरुषार्थ करना पडता है ।
- बाहुबलीजी एक वर्ष तक ध्यान में स्थिर रहे थे, परंतु भीतर में रहे मान कषाय के कारण केवलज्ञान पा न सके, परंतु जैसे ही वे भीतर से नम्र बने, उन्हें केवलज्ञान की भेंट मिल गई ।
- भरत महाराजा 1,92,000 स्त्रियों के भोक्ता थे, फिर भी भीतर से अनासक्त योगी थे । इसी के फलस्वरुप उन्हें एक छोटे से निमित्त से भी केवलज्ञान हो गया था ।
- उत्कृष्ट भाव से श्रीचंद्र केवली ने वर्धमान तप की आराधना की थी परिणाम स्वरुप 800 चौबीसी तक उनका नाम अमर रहेगा ।

- आयंबिल से शरीर थोडा कमजोर हो सकता है, परंतु आत्मतेज तो बढता ही है ।
- धन्ना अणगार ने सिर्फ 9 महिने चारित्र का पालन किया, परंतु उत्कृष्ट भाव के फलस्वरुप सर्वार्थ सिद्धविमान के भोक्ता हो गए ।
- आयंबिल व अट्ठम तप को जैन शासन में मंगल रुप कहा है ।
- पत्थर फेंकनेवाले को भी आम का झाड मीठे फल देता है ।
- बालक को चलना व बोलना माँ बाप सीखाते है, परंतु वही बच्चा बडा होकर कृतघ्नी बनकर माँ बाप को बैठना व चूप रहना सीखा देता है ।

- दीपक खुद जलकर दूसरों को प्रकाश देता है । धूपबत्ती स्वयं जलकर दूसरों को सुगंध देती है, जबकि एक स्वार्थी मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए अनेक जीवों को त्रास देता है ।
- जिस वस्तु को हमने अपनी नहीं मानी, उस वस्तु को छोडते समय दिल में दु:ख नहीं होता है ।
- करोडों रुपयों का दान आसान है, परंतु शील का पालन कठिन है । शील के पालन से भी शरीर की ममता को छोडना अत्यंत कठिन है ।
- वस्तुपाल धर्म का मर्म जानते थे, अत: उन्होंने प्रभु से राज्य प्राप्ति की मांग नहीं की, बल्कि समाधि मृत्यु, दीनता रहित जीवन और मृत्यु समय प्रभु के सान्निध्य की ही मांग की ।

- जीवन में समाधि की प्राप्ति के लिए दुष्कृत गर्हा, सुकृतानुमोदन और चतु: शरण गमन का पुन: पुन: पाठ करना चाहिये ।
- कर्म की मलिनता को दूर किया जाय तो अपनी आत्मा भी परमात्मा बन सकती है ।
- एक बार भी आत्मा को सम्यग्दर्शन का स्पर्श हो जाय तो वह आत्मा अर्द्ध पुद्गल परावर्त काल के अंदर अवश्य मोक्ष प्राप्त करती है ।
- श्रावक जीवन में हिंसा आदि पांच पापों का संपूर्ण त्याग शक्य नहीं है, इसलिए उन पांच पापों का आंशिक त्याग अणुव्रत कहलाते है ।

- भगवान को मानना आसान हैं, भगवान का मानना कठिन है ।
- 22 तीर्थंकरों ने अपने निर्वाण के पूर्व मासक्षमण का तप किया था ।
- गोचरी वापरते समय राग हो जाय उसे अंगार दोष और द्वेष हो जाय उसे धूम्र दोष कहते है ।
- पर्वदिनों में आरंभ-समारंभ का यथाशक्य त्याग करना चाहिये ।
- साधु शरीर के निर्वाह के लिए भोजन करे, राग के पोषण के लिए नहीं ।
- चक्रवर्ती और इन्द्र से भी बढकर भौतिक सुख तीर्थंकर परमात्मा को गृहस्थ जीवन में होते हैं, फिर भी वे उनका त्याग करते है । क्योंकि वे क्षणिक और नाशवंत है ।

- आज आदमी मृत्यु को भी भूल गया है । मृत्यु का स्मरण तो वैराग्य का प्रबल कारण है ।
- प्रवचन श्रवण के पूर्व गुरुवंदन और वाचना के तीन आदेश मांगना अनिवार्य है ।
- विधि के पालन और आशय की शुद्धि के साथ किया गया छोटा सा धर्मानुष्ठान मोक्ष का कारण बनता है ।
- खुले आसमान में न भोजन पकाना चाहिये और न ही भोजन करना चाहिये ।
- सूर्य अस्त हो जाने के साथ ही वातावरण में असंख्य जीव पैदा हो जाते है । रात्रि में भोजन करने से उन सभी जीवों की हिंसा का दोष लगता है ।

- मोहनीय कर्म का क्षयोपशम न हो तो ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम भी लाभ के बदले नुकसान ही करता है ।
- अहंकार और ममकार आत्मा को अंध बनानेवाले है ।
- प्रभु की आज्ञा को शिरोधार्य करने के लिए श्रावक अपने मस्तक पर तिलक करता है ।
- एक कुएं का पानी, दूसरे कुएं के पानी के लिए भी शस्त्र बन जाता है ।
- लोहा, स्टील और प्लास्टिक तीनों अशुद्ध पदार्थ है । मंदिर में उनका उपयोग नहीं होना चाहिये ।
- प्रभु की अंगरचना रुई से नहीं होनी चाहिये, क्योंकि वह मूल्यहीन वस्तु है ।

- दान और तप यथाशक्ति होने चाहिये । भावना के लिए किसी बल की अपेक्षा नहीं है । शरीर से कमजोर भी उत्तम भावना कर सकता है ।
- नवकार से बढकर कोई मंत्र नहीं, शत्रुंजय से बढकर कोई तीर्थ नहीं और पर्युषण से बढकर कोई पर्व नहीं !
- तारक तीर्थंकर परमात्मा भी समवसरण में बैठकर सर्वप्रथम *'नमो तित्थस्स'* कहकर स्वयं के द्वारा स्थापित तीर्थ को नमस्कार करते है ।
- प्रभु के द्वारा स्थापित तीर्थ पंच-परमेष्ठी रुपी रत्नों की खान है ।
- सभी गणधर भगवंत भिन्न भिन्न द्वादशांगी की रचना करते है, उनमें शब्द का भेद जरुर होता है, अर्थ का भेद नहीं होता है ।

- प्रभु के जन्म समय इन्द्र महाराजा प्रभु जन्माभिषेक क्षीर समुद्र के जल से करते है, उसी के अनुकरण के रुप में श्रावक प्रभु का प्रक्षाल, गाय के दूध व सचित्त जल से करता है ।
- जीवन का पहला दिन कौनसा ? यह हमें पता हैं, परंतु जीवन का अंतिम दिन कौनसा ? यह हमें पता नहीं है ।
- सभी को यही हमारी विडंबना है । साँप का भय है, पाप का भय किसी को नहीं । इसी कारण आज जीवन में अनेक प्रकार के पापाचरण बढे है ।
- सभी मनुष्यों की सारी वेदना को इकट्ठी करे और उसे अनेक गुना करे, तो भी नरक की वेदना की तुलना नहीं हो सकती ।

- पहले court पर लिखा था, 'Court of Jutice' परंतु आजादी के बाद court of law । यदि आप law से गुन्हेगार हो, तो court सजा देती है । परंतु कर्म की court तो प्रत्येक गुन्हे की सजा करती है ।
- साधर्मिक की भक्ति, तीर्थंकर नाम कर्म के बंध का हेतु है ।
- रात्री में सोने के बाद हमारा मन हमारे हाथ में नहीं होता है । फिर भी हमारी आत्मा की दुर्गति न हो इस हेतु हमें आहार, शरीर और उपधि का सर्वथा त्याग करना चाहिए ।
- जंगलों में जाकर एकांत में रहकर साधना करना आसान है, जबकि काम के घर में रहकर काम वासना को भीतर में भी स्पर्श नहीं होने देना ऐसे स्त्री परिषह को सहन करने का कार्य, मात्र स्थूलभद्र महामुनि ने किया था ।

- किसी भी व्यक्ति का पतन अचानक नहीं होता, सबसे पहले पाप मन में आता है ।
- हमारी आत्मा पर अच्छे-बूरे निमित्तों का प्रभाव अवश्य पड़ता है । अत: हमेशा अच्छे निमित्तों के बीच रहने का उपदेश भगवान ने दिया है ।
- हमारी आत्मा पर प्रति समय अनंत कर्म पुद्गल चोंट रहे है और छूट रहे है ।
- कई लोग पुण्य के उदय में पाप कार्य करते है, ऐसे लोगों से ये दुनिया भरी हुई है । पापानुबंधी पुण्य के उदय से प्राप्त हुई सत्ता, संपत्ति और शक्ति आत्मा को दुर्गति में ले जाने वाली है ।

- छोटी से छोटी धर्म क्रिया भी यदि देव-गुरु की आज्ञा अनुसार हो तो बड़े फल देने वाली है और बड़ी से बड़ी धर्म क्रिया भी आज्ञा विरुद्ध है, तो उसकी कोई कीमत नहीं ।

  सम्यग् दृष्टि की नवकारशी भी तामली तापस के 60,000 वर्ष की तपश्चर्या से बढ़ जाती है ।
- दान और तप के विषय में शक्ति का ख्याल रखना है । यथाशक्ति दान व तप कहा है ।
- खाने के लिए जीवन नहीं जीना है, जीवन जीने के लिए खाना-पीना जरुरी है । मात्र खाना ही यदि जीवन का ध्येय हो तो ऐसा जीवन कुत्ते के समान है, वह भी खाना खाकर अपना जीवन पूर्ण कर रहा है ।

- देवताओं को कवलाहार नहीं होता है क्योंकि इच्छा मात्र से क्षुधा पूर्ति हो जाती है । नरक के जीवों को भूख-प्यास खूब ज्यादा है, परंतु खाने के लिए एक दाना भी नही और पीने के लिए एक बूंद भी पानी नहीं ।
- कवलाहार मात्र पशु और मनुष्य को है ।
- पशु जन्म के दो कारण (1) जो नमस्कार योग्य थे, उन्हें नमस्कार नहीं किया और (2) नहीं करने योग्य को नमस्कार किया ।
- मनुष्य जन्म दुर्लभ, उसमें भी आर्य देश और धर्म की सारी सामग्री प्राप्त होना अत्यंत कठिन है ।
- पापानुबंधी पुण्य का अंत कटु होने से हेय है ।

- जैनं जयति शासनम्-सभी धर्मों में प्रधान धर्म जैन धर्म है, क्योंकि वह सर्वज्ञ के द्वारा प्ररुपित है ।
- भौतिक सुख सामग्री तो पापानुबंधी पुण्य से भी प्राप्त हो सकती है, जो आगे जाकर पाप कराने वाली है ।
- P.M. पद भी दुर्लभ नहीं, परंतु धर्म की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ है । उसमें भी द्रव्य से धर्म की प्राप्ति आसान है, भाव से धर्म की प्राप्ति अत्यंत कठिन है ।
- श्रावक जीवन के दो गुणस्थानक 1) सम्यग्दृष्टि और 2) देश विरति ।
- साधु जीवन के नियमों में कोई छूट नहीं है, जबकि श्रावकों के 12 व्रतों में 13 अरब से अधिक विकल्प है ।

- कोई व्यक्ति अपनी भूल बतावे और उस पर नाराजगी हो तो समझना चाहिए कि अपनी भाग्यदशा विपरीत हो गयी है ।
- भूल हुई हो और बतावे तो भूल सुधारने का मौका समझना और भूल नहीं हुई हो और भूल बतावे तो क्षमा रखने का मौका मिला, ऐसा समझना चाहिए ।
- गुरु मुख से निकले कठोर वचन भी मलयाचल पर्वत के चंदन की सुगंध वाला पवन समझना चाहिए ।
- अभिग्रह पूर्वक किया हुआ तप जबरदस्त कर्म निर्जरा करवाता है ।
- कार्य की क्रिया तो इसी भव में पूर्ण हो जाती है, परंतु संस्कार तो भवोभव साथ चलते है ।

- मन के परिणाम के अनुसार कर्मों का बंध होता है । प्रवृति पुण्य की हो परंतु मन में मलिनता हो तो पाप का बंध होता है ।

  प्रवृति पाप की हो परंतु मन में शुभ भावहो, तो पुण्य का बंध होता है ।
- Tit for Tat की नीति धर्म नीति नहीं है । धर्म नीति तो सहन करने की नीति है । जैसे चंदन को काटने वाली करवत को भी चंदन सुगंधी बनाता है ।
- कुमारपाल महाराजा चातुर्मास में छ में से पांच विगई का त्याग, मात्र 8 द्रव्य से एकासना और पाटण शहर से बाहर जाने का त्याग करते थे ।

- जीवन में Turning Point आ जाए तो पापी भी पावन बन सकता हैं, पामर भी परम बन सकता है ।
- जैन धर्म के कट्टर द्वेषी रहे ऐसे, हरिभद्र पुरोहित को जीवन में एक छोटा-सा निमित्त मिला और पूरा जीवन बदल गया । विशिष्ट ज्ञान के कारण वे *सूरि पुरंदर* के रुप में जाने जाते है ।
- सामायिक मोक्ष प्राप्ति का मुख्य अंग है जो परम सर्वज्ञ तीर्थंकरों के द्वारा भाषित है । वह किसको होती है तो कहते हैं, 'जिनको एक और वसुले से छीला जाए और दूसरी ओर चंदन का विलेपन किया जाए तो भी उन दोनों परिस्थिति में समान भाव रखते हो ।
- विनय से ज्ञान की प्राप्ति होती है, जो ज्ञान विरति प्राप्त कराकर मोक्ष सुख देने वाला होता है ।

- पार्श्वनाथ भगवान की स्तुति में कहते है 'एक ओर कमठ उपसर्ग कर रहा है और दूसरी ओर धरणेन्द्र भक्ति कर रहा है, उन दोनों स्थिति में भी भगवान ने समभाव की साधना की ।
- संगम देव ने भगवान पर एक रात्रि में 20-20 मरणांत उपसर्ग किये, और छह महिने तक गोचरी में अंतराय किया, ऐसे संगम पर भी भगवान ने करुणा भाव धारण किया ।
- 7 वें गुणस्थानक के बाद मोक्ष की भी अभिलाषा नहीं होती ।
- 22 परिषह में सम्मान भी एक प्रकार का परिषह है । सम्मान के अवसर पर सम्मान देने वाले पर राग नहीं करना, अत्यंत कठिन है ।
- प्रभु दर्शन के बिना श्रावक को नवकारशी पारने का अधिकार नहीं है ।

- साधु जीवन में Dress Fix संसारीओं का Address Fix.
- सामायिक के चार भेद-श्रुत, सम्यक्त्व, देश विरति और सर्व विरति । श्रुत सामायिक तो अभव्य जीव भी कर सकते है, परंतु अन्य सामायिक भव्य और समकिती जीव ही कर सकते है ।
- विनय पूर्वक प्रवचनादि का श्रवण करना, श्रुत सामायिक है ।
- परमात्मा के वचनों पर पूर्ण श्रद्धा रखना, वह सम्यक्त्व सामायिक है ।
- पानी में डूबते हुए व्यक्ति को उसमें से निकलने के लिए जो तड़फन होती है वैसे ही तड़फन संसार का त्याग कर मोक्ष में जाने की होनी चाहिए ।
- नवकार, करेमि भंते ! और नमुत्थुणं ये तीनों शाश्वत सूत्र है ।

- मुहपत्ती के 50 बोल में जैन धर्म की समस्त साधना का समावेश है ।
- कई लोग मात्र श्रुतज्ञान के सूत्र सीख लेते है, परंतु अर्थ और तत्व तक पहुँच ही नहीं पाते हैं ।
- प्रतिक्रमणादि क्रियाएं मात्र गतानुगतिकता और जड़ क्रिया के रुप में हो जाती है, उसका मुख्य कारण सूत्र के अर्थों का ज्ञान नहीं है ।
- नवकार-14 पूर्वों का सार है, तो करेमि भंते ! द्वादशांगी का सार है ।
- यद्यपि चातुर्मास तीन है, फिर भी आषाढी चातुर्मास का विशेष महत्त्व है । इस चातुर्मास को सफल बनाने के लिए 9 अलंकार स्वरुप आराधनाएं बताई है ।

- श्रावकपना तभी कहलाता है, जब साधुपने को पाने की तीव्र अभिलाषा हो ।
- श्रावक जीवन में प्रत्येक सामायिक में करेमि भंते की प्रतिज्ञा है, और साधु जीवन में प्रतिदिन नौ बार करेमि भंते ! का स्मरण है । 3 बार राई प्रतिक्रमण में, 3 बार देवसि प्रतिक्रमण में और 3 बार संथारा पोरिसी में ।
- तीर्थंकर की केवलज्ञान के पहले सारी साधना, स्वयं के लिए, परंतु केवलज्ञान के बाद एक मात्र जगत् के सभी जीवों के कल्याण की साधना है ।
- सामायिक में किसी का सत्कार कर नहीं सकते है, तो बहुमान ग्रहण भी नहीं कर सकते है ।

- सर्वाधिक जीवों की उत्पत्ति इस आषाढ चातुर्मास में होती है, अत: उनकी रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है । साधु-साध्वी के लिए विहारादि बंद हो जाते है । समय बचता है, उसमें विशेष तप, स्वाध्याय आदि की आराधना करनी चाहिए ।
- भगवान महावीर ने अपने घुटनों का उपयोग मात्र विहार और कायोत्सर्ग में ही किया तथा जब केवल ज्ञान प्राप्त किया तब भगवान न तो बैठे थे, न ही खड़े थे, वे 48 घंटो से गोदोहिकासन में थे ।
- उनके 12 ½ वर्ष की साधना में मात्र अंतर्मुहूर्त ही प्रमाद काल रहा, शेष समय में अप्रमत्त साधना रही । श्री ऋषभदेव स्वामी का 1000 वर्ष के साधना काल में मात्र एक अहोरात्र का प्रमाद काल था ।

- तारक परमात्मा अभिलाप्य और अनभिलाप्य दोनों पदार्थों को जानते है । परंतु बता सकते है मात्र अभिलाप्य । जो अभिलाप्य है, उसका भी अनंतवां भाग ही शब्दों के द्वारा बताया जा सकता है ।
- जैन धर्म के आचरण से मात्र आत्मा की ही सुरक्षा नहीं होती, परंतु आरोग्य भी सुरक्षित रहता है ।
- तप धर्म का उदेश्य मोक्ष प्राप्ति का होना चाहिए ।
- भगवान महावीर के हाथों से सर्व प्रथम दीक्षा पाने वाले गौतमस्वामी थे ।
- छद्मस्थ को ज्ञान में उपयोग देना पड़ता है । केवलज्ञान में उपयोग नहीं लगाना पड़ता है, सभी दृश्य आखों के सामने ही होते है ।

- एक ओर 12 ½ वर्ष की साधना, जिसके फलस्वरुप प्राप्त केवलज्ञान के बाद परमात्मा ने रात्रि में 12 योजन का विहार किया और पावापुरी में जाकर शासन की स्थापना की ।
- अप्रमत्त साधना से लब्धि की प्राप्ति होती है, जबकि लब्धि का उपयोग एक प्रकार का प्रमाद है ।
- गणधर भगवंत उसी भव में मोक्षगामी होते है, परंतु अपने मोक्ष को निश्चित करने के लिए गौतम स्वामी जी अष्टापद पर गए थे ।
- शरीर हष्ट पुष्ट हो वह तपस्वी नहीं है, और जो तपस्वी हो, वह दुबला ही हो ऐसा कोई एकांत नियम नहीं है ।
- गौतम स्वामी भगवान के आगे विनयवान और नम्र होकर बैठते थे, और विस्मित होकर सुनते थे ।

- जितने जीव भगवान के आलंबन से मोक्ष प्राप्त करते है, उससे अनेकगुनी आत्माएँ प्रभु के शासन को प्राप्त कर मोक्ष में जाती है ।
- स्थापना रुप प्राप्त हुए परमात्मा को साक्षात् परमात्मा ही मानना है ।
- सामान्य केवली और तीर्थंकर का ज्ञान एक समान, परंतु वाणी में भेद होता है । तीर्थंकर की वाणी वचनानिशय से युक्त है । सामान्य केवली को वचनातिशय नहीं ।
- भगवान स्वयंसबुद्ध होने से सर्व विरति को स्वीकार समय ''करेमिभंते'' सुत्र में ''भंते'' शब्द, जो दो बार आता है, उसका उच्चारण नहीं करते है ।

- वृक्ष खूब बड़ा हो सकता है, परंतु वह एक छोटे से बीज में ही समा हुआ है ।
- जो उत्पन्न होता है, नष्ट भी होता है और शाश्वत भी है । जगत् में द्रव्य हमेशा विद्यमान होता है, जबकि द्रव्य के पर्याय प्रति समय बदलते रहते है ।
- आज हमारे जीवन में शारीरिक व मानसिक सहन शक्ति घटी है ।
- कमल को पैदा करने का काम तालाब का पानी करता है, परंतु उसकी सुगंध को फैलाने का कार्य हवा करती है ।
- गुणानुराग-सज्जनता का गुण है । सजन पुरुषों की दृष्टि ''गुण दृष्टि'' होती है ।
- भूल का मुख्य कारण मोहनीय कर्म है ।

- दुर्जन पुरुष की दृष्टि, दोष दृष्टि वाली होती है ।

  दुर्योधन की नजर में कोई भी सज्जन नहीं था, युधिष्ठिर की नजर में कोई दुर्जन नहीं था ।

- मोहनीय कर्म के क्षय होने पर ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अंतराय कर्म एक साथ नष्ट हो जाते है । इन्हें नष्ट करने के लिए विशेष कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है ।

- दिगंबर लोग 45 आगमों को स्वीकार नहीं करते, स्थानक वासी मात्र 32 आगम मानते है ।

- पंचम काल में आत्म कल्याण को करने के लिए जिनबिंब और जिनागम ही आधार है ।

- भगवान के वचनों का श्रद्धापूर्वक श्रवण करे, वह श्रावक ।

- मात्र चातुर्मास में ही नहीं परंतु प्रतिदिन जिनवाणी का श्रवण अवश्य करना चाहिए ।

- जैसे Diabetes के Patient को Insulin का Injection जरुरी है, वैसे ही कर्मों के रोगों को Control में करने के लिए जिनवाणी रुप Injection जरुरी है ।

- कुमारपाल महाराजा के प्रतिबोध के लिए हेमचन्द्राचार्यजी ने योगशास्त्र और वीतराग स्तोत्र की संस्कृत में रचना की । जिसके स्वाध्याय के बाद ही वे अपना पच्चक्खाण पारते थे ।

- मनुष्यों में ही नहीं पशुओं में भी गुण होते हैं । विद्यार्थी को कुत्ते की तरह बनने को कहा है- अर्थात् कुत्ते में भी अल्प निद्रा का गुण होता है ।

- परमात्मा की भक्ति जगत् की सभी उत्तम वस्तु देने में समर्थ है ।
- गधे की विशेषता है कि वह अपने मालिक के ऊपर भारभूत नहीं बनता है ।
- देखने वाली आँखें तो सभी मनुष्यों को मिली है, परंतु गुणदृष्टि सिर्फ सज्जनों की ही मिली है ।
- आँख के दो दोष– (1) दृष्टि दोष और (2) दोष दृष्टि । जवानी में दृष्टि दोष हैरान करती है और वृद्धावस्था में दोष दृष्टि हैरान करती है ।
- जगत् में चार पुरुषार्थ है-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष । वर्तमान काल मे मोक्ष की सीधी साधना शक्य नहीं है, इस हेतु धर्म की आराधना करने की आज्ञा है ।

- 140 करोड की आबादी में मात्र 12500 जितने ही साधु-साध्वी है ।
- जगत में सभी वस्तुओं का मूल्य है, परंतु साधु जीवन जीने के लिए, एक भी पैसे की जरुरत नहीं ।
- मिला हुआ मानव शरीर, भाड़े का घर है । इसे एक दिन अवश्य छोड़ना है । तो क्यों न आज से ही शरीर के ममत्व का त्याग करे !
- आत्मा ही परमात्मा बनती है, परंतु अज्ञान और मोह के कारण हम शरीर को आत्म स्वरुप मानते है ।
- धन जीवन जीने का साधन है, परंतु धन को साध्य माने हुए व्यक्ति संसार में भी दु:खी है ।

- बहिरात्म दशा, अन्तरात्म दशा और परमात्मा दशा । जो शरीर अपना नहीं उसे अपना मानना बहिरात्म दशा है । आत्मा में आत्म बुद्धि, अन्तरात्म दशा है । आत्मा की विशुद्ध दशा को प्राप्त करना परमात्म दशा है ।
- जैन धर्म की आचार संहिता मात्र पुस्तकों में बंद नहीं है, परंतु आज भी जैन ग्रंथानुसार जैन साधु अपना जीवन जीते हैं ।
- मांडव गढ के महामंत्री-पेथडशाह । एक समय था, जब भोजन भी मुश्किल से प्राप्त होता था, तब परिग्रह परिमाण में 5 लाख स्वर्ण मुद्रा का नियम स्वीकार किया । भाग्य ने पलटा खाया, स्वर्ण सिद्धि हुई और उससे उन्होंने अपने जीवन में अनेकानेक सुकृत किये ।

- मम्मण के पास खुब संपत्ति थी परंतु उसका पतन हुआ । पुणिया श्रावक संतोषी रहा तो परमात्मा महावीर स्वामी के मुख से उसका नाम लिया गया ।
- जिस ज्ञान से राग द्वेष में वृद्धि होती हो तो वह ज्ञान, मिथ्याज्ञान है ।
- दर्शन-ज्ञान-चारित्र और तप की आराधना तभी सम्यग् हो सकती है, जब वह राग द्वेष का नाश करे ।
- भगवान के एक शब्द से अनेक की शंकाओं का समाधान होता है । श्री भगवती सूत्र में भगवान महावीर ने गौतमस्वामी के 36000 प्रश्नों का समाधान दिया है ।
- गौतम स्वामी प्रश्न करते थे और जिज्ञासा वृत्ति से अहोभाव पूर्वक सुनते थे ।

- 12 प्रकार के तप में स्वाध्याय भी एक तप है, जो खुब महत्त्वपूर्ण है ।
- 6 प्रकार के बाह्य तप के साथ 6 प्रकार के अभ्यंतर तप भी करना चाहिए ।
- जिनवाणी का श्रवण करते समय स्थितप्रज्ञ की तरह नहीं बैठना चाहिए । गुरु महाराज के वचन समझने पर चेहरे पर हाव-भाव प्रकट होने चाहिए । मन में शंका हो तो प्रश्न भी करना चाहिए ।
- संसार में इस जीवात्मा ने संसार के सुख के लक्ष्य से खूब सहन किया है परंतु धर्म के इरादे से नहीं । धर्म के इरादे से यदि सहन करे, तो बडी कर्म निर्जरा का कारण बनता है ।

- भगवान महावीर की मात्र तीन पाट परंपरा तक मोक्ष हुआ है ।
- अनिवार्य कारण बिना प्रवचन भी कुर्सी पर बैठकर नहीं सुनना चाहिए । उसमें गुरु की आशातना होती है । धर्म की आराधना का मुख्य उद्देश्य शरीर को कष्ट देना है ।
- एक ही स्थान पर अंगोपांगों को संकोच कर रखने से संलीनता का तप हो सकता है ।
- मन को साफ करना सबसे कठिन है, मन को साफ करने के लिए गुरु समक्ष अपने पापों को प्रकट करना चाहिए । आलोचना लेते समय बालक का हृदय बनाना है ।
- स्वाध्याय सर्वश्रेष्ठ तप है । एक घंटे के स्वाध्याय से हमें एकासना का लाभ होता है । बाह्य तप से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण अभ्यंतर तप है ।

- गतानुगतिकता से किया हुआ अनुष्ठान अननुष्ठान है ।
- प्रवचन करने में गीतार्थता जरुरी है । यदि परमात्मा के वचन से विरुद्ध वचन आ जाए तो बड़ा प्रायश्चित आता है ।
- जीवादि नव तत्त्वों का बोध जिसे हो वो सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है । परंतु आज श्रावक वर्ग में स्वाध्याय नहींवत् हो गया है ।
- वर्षों तक प्रवचन सुनने के बाद भी प्रवचन की बातें हमारे गले नहीं उतरती है । कारण प्रवचन श्रवण के पूर्व विनय नहीं है । जब विनय नहीं तो सम्यग्ज्ञान नहीं ।
- प्रवचन में गुरु महाराज के बाद में पहुचने से गुरु महाराज और जिन वचन के अनादर का दोष लगता है ।

- स्वाध्याय के 5 प्रकार-वाचना, पृच्छता, परावर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा ।
- सामायिक का काल मात्र 48 मिनिट ही क्यों ? धर्मध्यान की उत्कृष्ट स्थिति ज्यादा से ज्यादा इतनी ही रह सकती है ।
- जैन शासन के छोटे-छोटे भी अनुष्ठानों में भी सावधानी रखना जरुरी है ।
- जंबूकुमार-99 करोड संपत्ति के मालिक थे, परंतु उनका पुरुषार्थ मोक्ष के लिए था, अर्थ और काम के लिए नहीं ।
- साधुओं के पात्रे बाहर से लाल होते है, जो सिद्ध पद के ध्येय को याद करने के लिए है ।
- जहाँ लाभ होता है, वहा लोभ बढता जाता है ।

- जैसे आकाश का कोई अंत नहीं वैसे ही इच्छाओं का कोई अंत नहीं है ।
- संसार में सभी जीवों को मोह का नाश चढ़ा हुआ है ।
- जीवन में शराब का नशा होता है, जवानी का नशा होता है और धन का भी नशा होता है ये सारे नशे, कुछ देर, वर्षों या दशकों में पूरे हो जाता है, परंतु मोह का खतरनाक नशा उतारना अत्यंत कठिन है ।
- संसार में कण जितना सुख है, मण जितना पाप है, और टन जितना दु:ख है ।
- पैसे से रोग रोका नहीं जा सकता है । उल्टा पैसा होने पर रोग बढ़ते है । धन से भी ज्यादा शक्तिशाली पुण्य है ।

- पुण्य का भी भरोसा करने जैसा नहीं है, किस दिन समाप्त हो जाएगा, कोई नहीं जानता ।
- अमाप संपत्ति का मालिक-सद्दाम हूसैन भी बेमौत मारा गया । राजीव गांधी की श्मशान यात्रा में उसका चेहरा नहीं था । पुण्य पूर्ण होने पर सब कुछ विपरीत हो जाता है ।
- पुण्य से भी ज्यादा कीमत परमात्मा की है । जिनका साथ कभी नहीं छुटता है ।
- कोई भी व्यक्ति, जब तक जीवित है तब तक ही उपकार कर सकता है, परंतु परमात्मा का उपकार उनके निर्वाण के बाद भी चालू रहता है ।
- जिनवाणी पानी है, सम्यग्दर्शन-साबू है, तो सम्यग्चारित्र घर्षण है । तप का समावेश तीनों में है ।

- संयम ग्रहण करते समय बाहर के सभी बंधन छोड़े, परंतु शरीर का बंधन साथ में है ।
- आत्मा के साथ हमेशा से कार्मण और तैजस शरीर जुड़ा हुआ है ।
- 4 प्रकार के धर्म, दान, शील, तप और भाव में भी तप है ।
- शील पालन और भावना में मन भी जोड़ना है ।
- दान से अधिक कठिन है शील, शील से अधिक कठिन है तप और तप से भी अधिक कठिन है भाव ।
- वह व्यक्ति मुर्ख है जो बड़ी कठिनाई से प्राप्त चिंतामणी रत्न को व्यर्थ गंवा देता है ।

- गर्भ में सबसे पहले ओजाहार ग्रहण होता है बाद में लोमाहार और जन्म के बाद कवलाहार ।
- अधिकांश देवता मर कर तिर्यंच गति में चले जाते है ।
- गंदगी में जन्मा, गंदगी से बढ़ा और गंदगी स्वरुप इस शरीर पर राग-द्वेष करने जैसा नहीं । दुनिया के कारखाने अच्छे है जिसका **Raw material Third class और production first class** । मनुष्य शरीर ऐसा कारखाना है, जिसका **Raw material First class, और Production Third class** ।
- शरीर के सारे छिद्रों में से हमेशा गंदगी बाहर निकलती है । इसलिए मरने के बाद हिंदू लोग जला देते है, मुस्लमान लोग जमीन में गाड़ देते है ।

- देवताओं का जन्म औपपातिक शय्या में होता है । जन्म से ही शरीर हष्ट पुष्ट, शरीर में हड्डी, मांस, चर्बी, खुन, पसीना आदि नहीं है । शुद्ध शरीर, शक्तिओं से भरपूर, कभी अकाल मृत्यु नहीं, Accident नही ! बुढ़ापा नहीं और रोग भी नहीं है ।
- देवों के पास इतनी सत्ता, संपत्ति और शक्ति होने पर भी, भगवान ने देवभव को दुर्लभ नहीं बताया । भगवान ने मनुष्य भव को दुर्लभ कहा है ।
- देवता मात्र सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कर सकते है परंतु विरति धर्म की आराधना मात्र मनुष्य जन्म में ही शक्य है ।
- देवो को भी दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म हमको मिला है, परंतु प्रमाद के कारण इस भव को हार जाते है ।

- सर्वार्थ सिद्ध विमान और सिद्धशिला के बीच में मात्र-12 योजन का अंतर है, फिर भी उस स्थान को प्राप्त करने उन आत्माओं को 7 राजलोक नीचे आना पड़ता है ।
- देवो की सहायता से समुद्र में गिरा हुआ चिंतामणी रत्न प्राप्त कर सकते है, परंतु खोया हुआ मनुष्य जन्म फिर नहीं मिल सकता है ।
- जीवन का अधिकांश समय, अर्थ और काम पुरुषार्थ में बीत जाता है । ये पुरुषार्थ तो नाम मात्र के पुरुषार्थ है, वास्तविक पुरुषार्थ तो धर्म और मोक्ष है ।
- इस संसार में जन्म का रोग है, इसलिए मृत्यु की पीड़ा है । सिद्ध भगवान को जन्म नहीं है, अतः मृत्यु नहीं ।
- बालक और वृद्ध को भोजन नहीं, स्नेह चाहिए ।

- परमात्मा की पूजा भी इसी उद्देश्य से करनी है । परमात्मा जन्म, जरा और मृत्यु को तोड़ने में समर्थ है ।
- देव गति के बाद सद्गति होगी ऐसी कोई Gurantee नहीं, अतः धर्म की आराधना मात्र मनुष्य भव में है । इस भव में शक्य उतनी धर्म की आराधना कर ले ।
- अधिकांश देवता मर कर तिर्यंच गति में चले जाते है ।
- देव भव में मृत्यु के बाद सद्गति के chances कम है, दुर्गति के chances ज्यादा है ।
- साधर्मिक के प्रति वह वात्सल्य रखना है, जो एक माँ अपनी संतान के प्रति रखती है ।

- आचार्य शासन के आराधक, प्रभावक और रक्षक होते है ।
- बचपन में जिसे माँ-बाप का स्नेह-न मिले, तो जीवन तहस-नहस हो जाता है ।
- जो व्यक्ति देवो को दुर्लभ ऐसे मनुष्य जन्म को, धन और काम में नष्ट कर देते है वह सबसे बड़ा मूर्ख है ।
- गुरु भगवंत का कालधर्म शोक का कारण नहीं होता, परंतु उनकी विदाई से अवश्य दुःख होता है ।
- परमात्मा के शासन में चढ़ती पड़ती रही है । शासन एक समान नहीं चला है, कुमारपाल के शासन में, शासन मध्यान्ह के सूर्य समान तप रहा था ।

- पूरी दुनिया रमा और रामा के पीछे पागल है, परंतु रमा और रामा का त्याग करे, वह राम बने ।
- मोक्ष में जाने का निर्णय करना एक का अंक है, उसके बिना सारी धार्मिक क्रियाएँ शुन्य जैसी है ।
- श्रावक का जन्म घर में परंतु मरण उपाश्रय में होता है । आज जन्म भी घर में नहीं और मरण भी उपाश्रय में नहीं, दोनों कार्य Hospitals में होते हैं ।
- छोटा बच्चा यदि शैतान बने तो कोई विरोध नहीं करता तो साधु बने उसका विरोध क्यों ?
- अजैन के दिल में भी धर्म स्थापित करना, यह सच्ची प्रभावना है ।

- जैन साधु भी आजादी चाहते है, परंतु बाहर की नहीं, आत्मा की ।
- जो बार-बार अपनी गल्तियों को दोहराता रहे, वह मुर्ख ही नहीं बल्कि महामुर्ख है ।
- जैन दर्शन की प्राप्ति अनंतीबार हुई है परंतु इसे पाकर इसे सफल नहीं करना, महा मुर्खता की निशानी है ।
- परमात्मा की एक मात्र भावना, *'सभी जीवो को सुखी करुं ।'*
- प्रवचन का श्रवण तभी सार्थक बनता है, जब आत्मा को निर्मल बनाने वाले सर्व विरति के परिणाम प्रकट हो ! यदि वह न हो सके तो देश विरति के परिणाम । शायद वह भी न हो सके तो पाप का भय तो पैदा होना ही चाहिए ।

- जीवन में यदि समता भाव आता है-तो सारी आराधना सफल है ।
- दु:ख से घबराना कायरता है, पाप से घबराना शूरवीरता है ।
- यदि जीवन के अंतिम समय में समाधि रहती है, तो जीवन की सभी आराधना सार्थक है, और अंतिम समय में समाधि नहीं रहती है, तो सारी आराधना निष्फल है ।
- वर्षा की बुंदे (1) सांप के मुंह में गिरे तो जहर (2) छीप के मुख में गिरे मोती बन जाती है ।
- संसार के सुख मृगमरीचिका के समान है, इनमें मोहित होना मुर्खता है ।

- त्याग से भी वैराग्य कठिन है । वैराग्य होने पर त्याग आसान है । त्याग हो किंतु वैराग्य न हो, तो वह त्याग, त्याग ही नहीं है ।
- जिन धर्म का त्याग कर जो विषय सुखों में आसक्त रहते हैं, वे आत्माएं भवसागर तैरने के लिए लकड़ी की नाव छोडकर पत्थर की नाव का आश्रय ले रहे हैं ।
- सर्वज्ञ परमात्मा ने शाश्वत सुखों को प्राप्त करने के लिए, भव्य जीवों के कल्याण हेतु रत्नत्रयी की आराधना बताई है ।
- भगवान की देशना सुनने के लिए समवसरण में 363 पाखंड़ी भी आते है, परंतु योग्यता के अभाव में और मिथ्यात्व से ग्रसित होने से वे अपने ही कुमत को स्थिर करते है ।
- श्रावक जीवन में उपधान तप से सूत्रों की अनुज्ञा प्राप्त होती है ।

- व्यक्ति की योग्यता और पात्रता के अनुसार प्राप्त हुई शुभ सामग्री फलदायी होती है ।
- आसक्तियाँ अनेक प्रकार की होती है, मम्मण शेठ को धन की आसक्ति थी, वह मरकर 7वीं नरक में गया । कंडरिक मुनि को आहार की आसक्ति थी, वह भी 7वीं नरक में गया ।
- कोई भी कार्य होता है, उसके पीछे पाँच कारण काम करते है, काल, स्वभाव, भवितव्यता, कर्म और पुरुषार्थ ।
- जब संसार में से एक आत्मा सुख की चरम सीमा रुप मोक्ष प्राप्त करती है, तब दु:ख की चरम सीमा में रही एक आत्मा अनादि अव्यवहार राशि के दु:ख में से बाहर आती है ।

- आत्मा अनादि काल से है और आत्मा के साथ कर्म का संयोग भी अनादि काल से है । अनादि के इस संयोग को समाप्त करने का मार्ग भगवान ने बताया है ।
- निगोद का दु:ख 7वीं नरक से भी अधिक है । नरक में व्यक्त वेदना है, जबकि निगोद में अव्यक्त वेदना है । नरक की उत्कृष्ट स्थिति 33 सागरोपम है, परंतु निगोद की स्वकाय स्थिति अनंत कालचक्र है ।
- समाधि के लिए श्री पार्श्वनाथ भगवान की आराधना करनी चाहिए ।
- जीवन में अनुकूलता के बीच आराधना हो सकती है, परंतु मरण समय में समाधि रखना अत्यंत कठिन है ।

- तीर्थंकर नामकर्म की प्रकृति के अनुसार चौबीस तीर्थंकरों में परस्पर कोई भेद नहीं है । परंतु पार्श्वनाथ भगवान अपने विशिष्ट आदेय नामकर्म के कारण पुरुषादानीय कहलाते है ।
- पार्श्वनाथ भगवान की आराधना, जीवन में शांति, मरण में समाधि, परलोक में सद्गति और परंपरा से परम गति प्राप्त कराती है ।
- परमात्मा के सामने स्वस्तिक की रचना कर भक्त कहता है कि चार गति रुप इस संसार में भटकते हुए, मैंने खुब मार खाई है । हे परमात्मा ! मुझे इस संसार के भ्रमण से मुक्त करो ।
- स्त्री का जन्म पाप का उदय है, परंतु इस पाप के उदय को भी शील धर्म के पालन से पुण्योदय में बदला जा सकता है ।

- श्री पार्श्वनाथ भगवान ने पूर्व भव में 500 कल्याणकों की विशिष्ट कोटी की आराधना की थी । इसके फलस्वरुप उनकी आराधना करने से जीवन और मरण में समाधि प्राप्त होती है ।
- जगत् के जीवों पर सर्वाधिक उपकार तीर्थंकर परमात्मा के केवलज्ञान से होता है । पूर्व के तीसरे भव में की हुई भावना यहां सार्थक बनती है ।
- दया और करुणा तो अनेक जीवों में होती है, परंतु जो दया और करुणा तीर्थंकर में होती है, वह अन्य आत्माओं में नहीं होती है ।
- आलंबन चाहे अच्छा हो या खराब, हमारे मन के अनुसार वह उपकारी और अपकारी बनता है ।

- आत्मा में योग्यता न हो तो भगवान मिलने पर भी उपकार नहीं होता है और योग्यता हो तो सामान्य साधु का समागम भी उपकारक बन जाता है ।
- धन-सत्ता-संपत्ति आदि चाहे जितनी इकट्ठी की जाए, परंतु नाशवंत होने से साथ में नहीं आती है ।
- जीवन में आइ एक बुराई जीवन में दूसरी बुराइओं को लाए बिना नहीं रहती है । जिस स्त्री के जीवन में व्यभिचार का पाप आता है, उसके जीवन में गर्भपात का भी पाप आएगा ।
- गर्भपात के पाप में 3 गुन्हे 1) जीव हत्या 2) पंचेन्द्रिय जीव की हत्या 3) मातृत्व की हत्या । इस पाप के पीछे 2 कारण – 1) संतान नहीं चाहिए 2) शील का भंग ।

- गणधर रचित प्रतिक्रमण के सुत्रों में परिवर्तन करने का अधिकार हमें नहीं है ।
- भगवान की प्रतिष्ठा हृदय मंदिर में होनी चाहिए । हृदय मंदिर में भगवान की प्रतिष्ठा करने से पहले हृदय को साफ करना अत्यंत जरुरी है ।
- जिस प्रकार जहरीले सांप, चंदन के वृक्ष को लिपटे रहते है । परंतु एक मोर की टहुकार सुन कर वे सांप भाग जाते हैं । उसी प्रकार अनादि के कर्म हमारी आत्मा में जहरीले सांप की तरह आत्मा में लिपटे हुए है । परमात्मा का नामस्मरण, मोर की टहुकार जैसा है । भगवान के नाम स्मरण मात्र से आत्मा पर लगे कर्मों के जटिल बंधन छूट जाते है ।

- जैन धर्म के अनुसार प्रत्येक आत्मा में परमात्म-तत्त्व छिपा हुआ है, पुरुषार्थ के द्वारा उसे व्यक्त किया जा सकता है ।
- हमारी आत्मा पर सर्वाधिक उपकार सिद्ध और अरिहंतों का है । अव्यवहार राशि की निगोद से बहार निकालने में सबसे पहला उपकार सिद्ध का है ।
- जो आत्मा परमात्मा की आज्ञा का पालन करती है, वह आत्मा सुख को प्राप्त करती है, और जो आत्मा परमात्मा की आज्ञा का उलंघन करती है, वह आत्मा दु:ख प्राप्त करती है ।
- अजैन लोग मानते है, कि परमात्मा हमको सुख-दु:ख देते है । जबकि सत्य है कि कर्म सत्ता सब कुछ कार्य करती है ।

- कर्म सत्ता Supreme court के समान है ।
  चाहे जितना पाप करने पर भी यदि जीवात्मा धर्म सत्ता की शरण स्वीकार करे और पाप का पश्चात्ताप करे, तो पश्चात्ताप के आंसु हमारे सभी पापों को नष्ट करने में समर्थ है ।
- परमात्मा के दर्शन बिना मुंह में पानी भी डालना उचित नहीं है ।
- श्रावक जीवन योग्य छ: आवश्यक प्रत्येक व्यक्ति को करने की आज्ञा है, परंतु आत्मा के आवश्यक करने वाले श्रावक थोड़े है, जबकि शरीर के आवश्यक हर कोई व्यक्ति करता है ।
- जहाँ समस्या का पार नहीं, वह संसार है और जहाँ समस्याओं का नामो निशान नहीं वह मोक्ष है । ऐसे मोक्ष का मार्ग परमात्मा ने बताया है, अत: परमात्मा का उपकार सर्वोपरि है ।

- एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए जीवन में श्रम, भोजन व निद्रा सब कुछ जरुरी है ।
- प्रभु के साथ नाता जोड़ना हो तो हमें संसार से नाता तोड़ना होगा । संसार से नाता नहीं टूटा है, तो प्रभु से नाता जुड़ना कठिन है ।
- साधु जीवन में उपधान नहीं है, परंतु योगोद्वहन है ।
- गुरु महाराज के सामने गहुँली करते समय सिद्धशिला अवश्य करनी चाहिए क्योंकि गुरु महाराज के पास भी हमें मोक्ष ही मांगना है ।
- भगवान महावीर स्वामी के शासन में 180 से ज्यादा उपवास की आज्ञा नहीं है, यदि कोई करता है, तो उसे परमात्मा की आज्ञा भंग का दोष लगता है ।

- उपधान तप में सभी दिनों में हरी वनस्पति का त्याग होता है, क्योंकि उपधान तप में पौषध होता है ।
- इन्द्र महाराजा भी पांच रुप धारण कर भगवान को मेरु पर्वत पर ले जाते है और अंत में भगवान के आगे बैल बनकर अभिषेक करते है ।
- सार्वजनिक स्थानों में रात्री भोजन न हो उसका ध्यान रखना चाहिए । यदि सार्वजनिक स्थानों में पालन न हो तो सामान्य लोग, इसका अनुकरण करते है, जिससे पापाचरण बढ़ता है ।
- जैन शासन की सारी आराधनाए पंचाचार के पालन में है । इनके मूल भेद-5 और उत्तर भेद-39 है ।
- जगत् में सर्वोच्च पद को पाये हुए वीतराग परमात्मा की भक्ति करने से हमें भी उनके समान सर्वोच्च पद की प्राप्ति होती है ।

- परमात्मा के सिर पर छत्र क्यों ? जगत् के जीवों को यह बताने के लिए कि ये वीतराग, जगत् के सभी जीवों के लिए छत्र समान है ।
- परमात्मा के सामने हमें भी नम्र बनना है । परमात्मा की द्रव्य पूजा, इन्द्र महाराजा के द्वारा किये गए जन्माभिषेक का प्रतीक है, अतः उसमें जो सौधर्मेन्द्र ने किया वह हमें भी अनुकरणीय है ।
- मात्र ग्राहक ज्यादा आए तो लाभ ज्यादा होता है, ऐसा कोई नियम नहीं हैं । दुकान का माल यदि **50% Discount** पर बेचे तो ग्राहक तो ज्यादा होंगे, परंतु सुपड़े साफ हो जाएंगे ।
- परमात्मा की पूजा में मूल्यवान वस्त्रों का उपयोग करना चाहिए । रेशमी वस्त्र प्रभु पूजा में सर्वोत्तम है ।

- भक्ति के द्रव्यों में अथवा भक्ति के कार्य में जो जरुरी हिंसा होती है वह हिंसा, स्वरुप हिंसा है, अनुबंध हिंसा नहीं है ।
- भक्ति करने में जीवों की विराधना है, परंतु विराधना का भाव नहीं है, बल्कि विराधना से बचा जा सके ऐसे मोक्ष प्राप्ति का ध्येय है, तो वह हिंसा, मात्र स्वरुप हिंसा ही है, अनुबंध हिंसा नहीं ।
- व्रतधारी श्रावक को स्थावर जीवों की विराधना के त्याग की प्रतिज्ञा नहीं है । प्रभु की पूजा में स्थावर जीवों की हिंसा होती है, परंतु वहां हिंसा का भाव नहीं है ।
- राजा महाराजा के पास जाना हो तो जैसे खाली हाथ नहीं जाते हैं, तो भगवान के पास खाली हाथ कैसे जाया जाए ?

- मन शुद्धि सबसे कठिन है । जिनालय में भी खराब विचार आ जाए तो उसके निवारण का पुरुषार्थ जरुर करना चाहिए । खराब विचार आने पर प्रयत्न पूर्वक उसे टालना चाहिए न कि मंदिर जाना छोड़ देना चाहिए । यदि काई गलत विचार आ जाए तो आलोचना से शुद्धि करनी चाहिए ।
- जिनालय में भूमि शुद्धि भी जरुरी है । जिनालय को बनाते समय भूमि को खुब नीचे तक खोदना चाहिए, जहाँ तक पानी या पत्थर न आवे, तब तक खोदना चाहिए । हो सकता है, जिस जगह पर आज मंदिर बन रहा है, पूर्व में कब्रिस्तान भी हो । अतः भूमिशुद्धि जरुरी है ।
- साधु जीवन में तीर्थ यात्रा के बदले संयम यात्रा प्रधान है ।

- मार्ग में गुरु महाराज दिखे, तो वहां फिट्टा वदन रुप *'मत्थएण वंदामि'* करना जरुरी है । यदि न करे तो आशातना का दोष होता है ।
- पूजा में उपकरण शुद्धि भी होनी चाहिए । शक्ति अनुसार उत्तम द्रव्यों से परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए ।
- सर्वश्रेष्ठ आदेय नामकर्म के स्वामी थे, श्री पार्श्वनाथ भगवान । उसका कारण पूर्व भव में प्राणत देवलोक में 500 तीर्थंकरों के कल्याणकों की आराधना ।
- आत्मा में योग्यता और पात्रता हो तो आत्म-जागृति के लिए एक छोटा-सा निमित्त भी बस है ।
- तीर्थंकर की आत्मा को भी कर्म की सजा अवश्य होती है ।

- व्यक्ति से जिस प्रकार का ऋणानुबंध हो, उसके अनुसार संबंध होते है । जहाँ प्रेम का अनुबंध, वहाँ प्रेम होता है और जहाँ द्वेष का अनुबंध, वहाँ द्वेष होता है ।
- परमात्मा के बाह्य चमत्कार बाल जीवों को आकर्षित करते है, परंतु हमें उनके स्वभाव का आकर्षण होना चाहिए ।
- हमारी आत्मा पर सर्वाधिक उपकार पंच परमेष्ठिओं का है ।
- जैसे ध्रुव का तारा हमें उत्तर दिशा बताता है, वैसे ही सिद्ध भगवान हमें अपनी साधना के लक्ष्य को बताते हुए हम पर उपकार करते है ।
- द्रव्य के 3 अर्थ होते है 1) पदार्थ 2) भाव रहित क्रिया और 3) धन ।

- अरिहंत परमात्मा भव्य जीवों को बोध देने हेतु धर्म शासन की स्थापना करते हैं । उनका असीम उपकार है । आचार्य, उपाध्याय और साधु अपने प्रवचन और अपने जीवन से हमें मोक्ष, साधना में आगे बढाने में उपकार करते हैं ।
- प्रभु पूजा में द्रव्य शुद्धि में इन तीनों द्रव्य की शुद्धि जरुरी है । प्रभु पुजा में Plastic आदि द्रव्य का उपयोग नहीं करना, भाव रहित क्रिया नहीं करना, और धन भी न्याय संपन्न होना चाहिए ।
- जिसको पदार्थ में आसक्ति होती है, वही झगड़ा करता है । जिसे पदार्थ में आसक्ति नहीं है और मोक्ष प्राप्ति की इच्छा है, वह ही विरक्त हो सकता है ।

- पुण्यानुबंधी पुण्य से प्राप्त संपत्ति, सत्ता, शक्ति की प्राप्ति भी आसान और त्याग भी आसान है, वह शक्कर पर बैठी मक्खी समान होता है ।
- आज भौतिक सुखों की लालसा बढ़ी है, जिसके कारण हमारी श्रद्धा परमात्मा से घटकर देवी-देवताओं में बढी है ।
- कर्म विज्ञान के अभ्यास से सुख और दु:ख में समाधि प्राप्त होती है । सुख में लीन और दु:ख में दीन बनने जैसा नहीं है ।
- विगई का भोजन विकृति पैदा करता है जो हमें विगति में अर्थात् दुर्गति में ले जाता है ।
- निर्विकार भाव पाना है तो जीवन में आयंबिल तप करना चाहिए ।

- सामने से देना *'उदारता'* है और किसी से मांगने पर मना नहीं कहना, वह दाक्षिण्य गुण है ।
- भरत क्षेत्र में 84000 वर्ष के तीर्थंकर विरह को देख, भगवान महावीर स्वामी ने अंतिम समय में 16 प्रहर तक निरंतर देशना दी थी ।
- शक्तिशाली को वैराग्य आना अत्यंत कठिन है ।

परमात्मा जहाँ स्थापित हो उसके ऊपर के स्थान पर हमारा पैर नहीं आना चाहिए । अत: गृह मंदिर में भी ऐसे स्थान पर ही परमात्मा की स्थापना करनी चाहिए, जिससे परमात्मा के बिंब के ऊपर किसी का पैर न आए ।

- परमात्मा के जिनालय में मांगने के लिए नहीं परंतु अर्पण करने के लिए जाना है ।

- जो प्रभु के आगे नाचता है, उसे संसार में नाचना नहीं पडता है ।
- सुबह उठकर हृदय में आठ पंखुडी वाला कमल बनाकर नवकार का जाप करना चाहिए ।
- कमलबद्ध एक नवकारवाली गिनने से हमें एक उपवास का लाभ मिलता है ।
- परमात्मा ने अपने हृदय में उपशम भाव से राग-द्वेष को जला दिया था ।
- प्रत्येक आत्मा के 8 रुचक प्रदेश ऐसे है, जो कर्म के बंधन से अलिप्त है ।

- अति पुण्यशाली व्यक्ति के संयोग से अन्य जीवों की प्रकृति भी बदल जाती है ।
- इन्द्र महाराजा भी परमात्मा की आरती उतारते है, उस लक्ष्य से हमें आरती उतारनी है ।
- परमात्मा की उत्तम द्रव्यों से पूजा करने पर हमारे चारित्र मोहनीय कर्म का क्षय हो जाता है, अतः भगवान की पूजा श्रेष्ठ द्रव्यों से करनी चाहिए ।
- इच्छापूर्वक किया हुआ त्याग सकाम निर्जरा कराने वाला है ।
- जैसे भक्ति का फल प्रत्यक्ष है, वैसे ही आशातना का फल प्रत्यक्ष देखा जाता है ।

- Raymond कंपनी के मालिक सिंघानिया आज दर-दर की ठोकरे खा रहा है, क्योंकि उसके पुत्र ने सारी संपत्ति जप्त कर ली और बाप को निकाल दिया । कलियुग की बलिहारी है ।
- चाहे कितनी भी समृद्धि क्यों न हो, सब छोड़कर जाना है । सब नाशवंत है ।
- जैसे नदियों से सागर कभी भी तृप्त नहीं होता, श्मशान कभी मृतकों से तृप्त नहीं होती, उसी प्रकार सारे भोग की सामग्री प्राप्त होने पर भी हम कभी तृप्त होने वाले नहीं है ।
- पंच परमेष्ठी का उद्‌गम-अरिहंत है अत: एक अरिहंत की भक्ति में पंच परमेष्ठी की भक्ति और आशातना में पंच परमेष्ठी की आशातना है ।

- तीर्थ यात्रा दरम्यान छ'री का पालन अवश्य करना है । छ'री का पालन न हो सके तो 5,4 आदि का पालन तो अवश्य करना चाहिए ।
- सारे विघ्नों को नष्ट करने और उत्कृष्ट पुण्य के बंध की ताकत परमात्म-भक्ति में है ।
- तीर्थ स्थान पर जाकर हम अन्य स्थान के पापों की शुद्धि करते है, परंतु तीर्थ स्थान में पाप बंधेगा तो उस पाप की शुद्धि कहां होगी ?
- आज तक हमें हमारी आत्मा पर प्रेम नहीं जगा है । इसीलिए हमारी सारी क्रियाओं का एक लक्ष्य शरीर रहा है । शरीर के रक्षण हेतु Doctor की सारी बातें मानते है, परंतु आत्मा के रक्षण हेतु देव-गुरु की आज्ञा नहीं मानते हैं ।
- सभी आत्मा का कल्याण करे, वह कल्याणक है ।

- दीक्षा लेने के बाद छठ्ठा गुणस्थानक होता है । प्रमत्त गुणस्थानक है । यहाँ भी प्रमाद के कारण पापाचरण होते हैं ।
- परमात्मा के तीर्थों की यात्रा से शरीर को थकावट लगती है परंतु आत्मा की भव भ्रमण की थकावट दूर होती है ।
  तीर्थंकर परमात्मा को पूर्व के तीसरे भव में सराग संयम होता है । सभी जीव को धर्म के रसिक बनाने की भावना भी एक इच्छा है, जो उसी भव में मोक्ष में जाने के लिए बाधक है ।
- बीज उत्तम हो तो फल भी उत्तम मिलता है । जैन शासन में भक्ति के पात्र सात क्षेत्र है, इनमें जो धन का वपन करना हो, वह न्याय संपन्न होना चाहिए । साथ में भक्ति पूर्वक इनमें लाभ लेना चाहिए । उसके बाद अनुकंपा और जीवदया में दान देना चाहिए ।

- देवद्रव्य का भक्षण करने से आत्मा अनंत संसारी बनती है ।
- संहार करना प्रगति नहीं, सर्जन करना प्रगति है ।
- द्रव्य प्राणों के नाश से भी भाव प्राणों के नाश में ज्यादा दोष लगता है ।
- 12 महिनों में चातुर्मास तो तीन होते है फिर भी आषाढ़ चातुर्मास की सबसे ज्यादा महिमा है ।
- साधुओं को 8 महिने विहार करना है, जबकि आषाढ़ चौमासे में जीवदया के पालन के लिए एक ही स्थान पर रहना है ।
- साधु जीवन में सबसे ज्यादा मूल्यवान पहला महाव्रत है । अन्य व्रत और नियम तो उस महाव्रत के पालन के लिए बाड के स्थान पर है ।

- पाप सिर्फ काया से नहीं बल्कि मन और वचन से भी होता है ।
- झूठ चोरी, मैथुन और परिग्रह के पाप में प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप में हिंसा रही हुई है ।
- अजैनो में तो पुत्रहीन व्यक्ति की सद्गति का निषेध किया है, जबकि जैन मतानुसार जो ब्रह्मचर्य का पालन करता है, उसे देवलोक और परमलोक की प्राप्ति होती है ।
- परमात्मा का शासन व्यवहार मार्ग पर चलता है । पर्वदिन, रात्रिभोजन, आर्द्रा नक्षत्र आदि के विषय में विशेष मर्यादाएं बताई है ।
- वर्ष भर में 6 अट्ठाइयाँ होती है । 3 चौमासी से पहले 8 दिन की, 1 पर्युषण और 2 नवपद ओली की ।

- परमात्मा के शासन में Quantity का महत्त्व नहीं है, Quantity से भी Quality ज्यादा महत्वपूर्ण है ।
- बाल जीवों को तत्काल फल का आकर्षण होने से कुमारपाल राजा की पुष्प पूजा का तत्काल फल 18 देश के राज्य की प्राप्ति बतायी जाती है । बाकि तो परमात्मा के धर्म की छोटे में छोटी आराधना भी मोक्षफल देने में समर्थ है ।
- 8 कर्मो में 4 घाति कर्म आत्मा के मूल गुणों का घात करते है । इनके क्षय हुए बिना भगवान, शासन की स्थापना नहीं करते है ।
- कुमारपाल ने पूर्वभव में (नरवीर ने) परमात्मा को 18 पुष्प चढ़ाए थे, जिसके फलस्वरूप 4 भवों में मोक्ष की प्राप्ति हो जाएगी । जब तक संसार में रहेंगे तब तक सर्वोच्च सुख मिलेगा ।

- कुमारपाल राजा को सत्ता मिली तो सत्ता के विस्तार का प्रयत्न नहीं किया, परन्तु आत्मिक लाभ हो ऐसे कार्य किए । 14 वर्षो में 1444 जिनालय निर्माण आदि अनेक धर्म कार्य करके अपनी संपत्ति का सद्व्यय किया ।
- चार गति के जीवों में सबसे कम संज्ञी मनुष्य है । देव और नारक असंख्य है, तिर्यंच अनंत है । देवों को भी दुर्लभ ऐसे मनुष्य जन्म की हमें प्राप्ति हुई है ।
- परमात्मा का शासन washing machine के समान है जो आत्मा के पापों को साफ करता है । ज्ञान और क्रिया पानी और साबून के स्थान पर है ।
- पूरी दुनिया का ज्ञान प्राप्त होने पर भी यदि वह ज्ञान आत्मा के लिए हितकारी नहीं हो तो वह अज्ञान ही है ।

- समुद्र का खारा पानी चाहे जितना पी ले, प्यास नहीं बुझती है । और शुद्ध निर्मल पानी थोड़ा भी पीए तो अवश्य प्यास बुझती है ।

  मिथ्या ज्ञान चाहे जितना हो वह आत्मिक प्यास बुझा नहीं सकता है, सम्यग्ज्ञान थोड़ा भी हो वह आत्मिक तृप्ति अवश्य देता है ।

- भोजन के अभाव में व्यक्ति भूखा रहे, तो वह दया पात्र है, परन्तु भोजन होने पर भी व्यक्ति भूखा रहे, तो वह मूर्ख है ।

  हमारे सारे ग्रंथ संस्कृत प्राकृत में रचे गए है, परन्तु भाषा को नही जानने से हमे वे लाभदायी नहीं होते है ।

- आज लोगो को धार्मिक पुस्तकों की Allergy है । आशातना के भय से उसे धार्मिक पुस्तक घर में रखना पसंद नहीं है ।

- लोग पुस्तके नहीं पढ़ते हैं, ऐसा नहीं है, पढ़ते तो बहुत है, परन्तु हल्का साहित्य ।
- वर्षो से बंद पड़े मकान को साफ करने के लिए सबसे पहले प्रकाश चाहिए, साथ ही नए कचरे को रोकने के लिए दरवाजे बंद करने पड़ते है, जिससे नया कचरा न आए और अंत में झाडु लेकर कचरे को निकाला जाता है ।
- 9 तत्त्वों में 8वाँ निर्जरा तत्त्व तप को आग की उपमा दी है ।
- ज्ञान-प्रकाश के समान है । अनादिकाल से आत्मा कर्म रुपी कचरे से जुड़ी है । कर्म रूपी कचरे की जानकारी सम्यग्ज्ञान से हो सकती है ।

- चारित्र और क्रिया के पहले ज्ञान को रखा है । ज्ञान होने पर ही चारित्र और क्रियाएँ सही हो सकती है ।
- खान से निकले सोने में खूब अशुद्धियाँ है, परन्तु जब वह आग में तपाया जाता है, तब वह शुद्ध बनता है । सोना कभी भी आग में जलता नहीं है, जलता है मात्र कचरा ।
- वीतराग परमात्मा के शासन की प्राप्ति होने के बाद ही आत्मा, प्रगति के पथ पर आगे बढ़ सकती है ।
- जो स्वयं कर्मो के बंधन से रहित होते हैं वे ही अन्य जीवों को कर्म के बंधन से मुक्त कर सकते हैं ।
- केवलज्ञान के बाद करुणा के अवतार परमात्मा प्रतिदिन दो प्रहर देशना प्रदान करते हैं ।

- आत्मा में नए कर्मों का आगमन न हो इसलिए परमात्मा ने संवर तत्व बनाया है ।
- कर्म का बंध हर भव में होता है । परन्तु मनुष्य भव में ही आत्मा सच्ची निर्जरा कर सकती है ।
- तिर्यंच गति में कष्टों को खूब सहन किया जाता है, परन्तु विशेष निर्जरा नहीं होती है, उनकी सारी निर्जरा अकाम निर्जरा होती है ।
- देव और नरक में कर्म का बंध ज्यादा होता है । देवों को भौतिक सुख ज्यादा होने से वे धर्म नहीं कर सकते हैं और नरक में दु:ख ज्यादा होने से वे भी धर्म नहीं कर सकते है ।

- नरक के जीवों को एक क्षण भी राहत नहीं है । खूब कष्ट सहन करने पर भी जितने पुराने कर्मों का क्षय नहीं होता है, उससे अधिक नए कर्मों का बंध हो जाता है ।
- धर्म में सुख, दु:ख और भूख बाधक है । देव, नरक और तिर्यंच में इनकी मात्रा खूब ज्यादा है । मात्र मनुष्य भव में इनकी प्रबलता नहीं है ।
- मनुष्य भव में ही धर्म की संभावना है फिर भी धर्म करने की इच्छा सभी मनुष्यों को नहीं होती है ।
- अधिकतर जैनों को धर्म की सर्वश्रेष्ट सामग्री मिलने पर भी उसकी सच्ची पहिचान न होने से, पाया हुआ धर्म गवाँ देते हैं ।

- जाति से जैन बनने के लिए पुण्य की अपेक्षा है । परन्तु धर्म से जैन बनने के लिए पुरुषार्थ की अपेक्षा है ।
- तिलक वाला समकिती, चरवला वाला देशविरतिधर श्रावक और रजोहरण वाला साधु कहलाता है ।
- आज अधिकांश लोगो में परमात्मा के वचनो में श्रद्धा ही नहीं है क्योंकि ज्ञान की कमी है ।
- गुरुगम के बिना प्राप्त ज्ञान आत्मा को ज्ञानी बना सकता है परन्तु विनयी नहीं ।
- ज्ञान पूर्वक देह को कष्ट देने से अत्याधिक कर्मों की निर्जरा बताई है ।

- ज्ञान भी सद्गुरु के पास लेना चाहिए । साधु जीवन में कोई भी ग्रंथ इच्छापूर्वक नहीं पढ़ा जाता । आगम आदि भी गुर्वाज्ञा एवं योग करके ही पढ़े जाते है ।
- विनय के अभाव में शास्त्र भी शस्त्र बन जाता है ।
- साधु जीवन पुण्य प्रधान नही, निर्जरा प्रधान है ।
- धर्म का पहला कदम दान है, फिर शील, तप और भाव धर्म में प्रवेश हो सकता है ।
- शील पालन करने वाला अभयदान भी देता है ।
- सोने के मंदिर और रत्नों की प्रतिमा के निर्माण से जो पुण्य बंध होता है, वह मन, वचन और काया से 1 दिन के शील धर्म के पालन से हो सकता है ।

- तप भी शील धर्म के पालन के साथ करना चाहिए ।
- तप के साथ जप भी जरूरी है । तप, तन के साथ संबंध तोड़ता है । तो जप परमात्मा के साथ संबंध जोड़ता है ।
- तप करने का मुख्य उद्देश्य शरीर की ममता को तोड़ना है ।
- तप का सीधा असर शरीर पर होता है । शरीर कमजोर होता है, परन्तु आत्मा पुष्ट होती है ।
- आत्मा के विकास के 14 steps है । देवता और नरक ज्यादा से ज्यादा 4 steps तक चढ़ सकते है । तिर्यंच मात्र 5 steps तक जबकि मात्र मनुष्य 14 steps पार कर मोक्ष प्राप्त कर सकता है ।

- समकिती आत्मा नरक के कष्टों को समतापूर्वक सहन करें तो ही कर्मबंध से बच सकती है और कर्म निर्जरा कर सकती है ।
- साधु के महाव्रत मेरू पर्वत के समान है और श्रावक के अणुव्रत राई के समान है । फिर भी दोनों का लक्ष्य एक ही मोक्ष पाने का है ।
- एक दिन का भी संयम मोक्ष एवं वैमानिक देवलोक देने में समर्थ है ।
- पर्व दिनो में विशेष आराधना करने से अधिक लाभ होता है ।
- श्रावक अन्य सभी कार्यो में कच्चे पानी का उपयोग करते हैं, परंतु पीने के लिए उबाले हुए पानी पीने की आज्ञा है, परन्तु बहुत कम लोग इसका पालन करते है ।

- चतुर्विध संघ के सभी सदस्यों को छह आवश्यकों की आराधना अवश्य करनी चाहिए । साधु-साध्वी तो इस नियम का पालन करते है । परन्तु श्रावक-श्राविका खूब अल्प प्रमाण में यह आराधना करते हैं ।
- सम्यग्दर्शन संसार को परिमित करता है, जबकि सर्वविरति उसका भी नाश कर देती है ।
- दान, शील, तप की आराधना भाव के साथ करनी चाहिए ।
- साधु जीवन में पूरे दिन आराधना करनी है । विराधना की कोई छूट नहीं है । कहीं विराधना हो जाय तो उसकी आलोचना करनी पड़ती है ।

- चौमासे में वर्षा होने से जीवोत्पति खूब बढ़ जाती है । उनकी विराधना से बचने के लिए अल्प भोजन और अल्प पानी से निर्वाह करना चाहिए ।
- जीवदया के क्षेत्र में सबसे बडा योगदान जैनों का है ।
- जन और जैन में दो मात्रा का भेद है । वे दो मात्रा दया और दान की है ।
- चाहे काल कैसा भी हो, इस काल में भी मोक्ष की साधना हमें मिली है ।
- श्रावक को द्रव्य दया और द्रव्य दान करना है । साधुओं को भावदया और ज्ञानदान करना है ।
- अनादिकाल से आत्मा चार गति रुप संसार में भ्रमण कर रही है ।

- व्रत-नियम आभूषण के समान है । आभूषण पहनने से शरीर की शोभा बढ़ती है । व्रत-नियमों से आत्मा की शोभा बढ़ती है ।
- सामायिक घर बैठकर नहीं बल्कि गुरू निश्रा में पौषधशाला एवं उपाश्रय में करनी चाहिए ।
- पौषधशाला और उपाश्रय में मात्र धर्म आराधना और साधर्मिक भक्ति हो सकती है । संसार की कोई भी प्रवृत्ति यहाँ नहीं होती है ।
- मंदिर और उपाश्रय जीवन में पाप प्रवृति से बचने के लिए Speed Breaker बंपर है ।

- भाव की खूब कीमत है । भाव पूर्वक की सूखी रोटी भी मीठी लगती है और भाव रहित पांच पक्वान्न भी सूखे लगते है ।
- आज तक जितने भी तीर्थंकर हुए है, उन्हें समकित की प्राप्ति सद्गुरू भगवंत के पास से हुई है ।
- भगवान अंतिम भव में स्वयंसंबुद्ध होते है, परन्तु पूर्व के मनुष्य भवों में वे भी सद्गुरु की उपासना करते है ।
- साधुओं को गुरू की शरण लेनी होती है , तो श्रावक को भी गुरू की शरण लेनी चाहिए ।
- गुरु के साथ में रहना समर्पण नहीं, गुरु के हृदय में बसना सच्चा समर्पण है ।

- 50,000 केवली शिष्यों के गुरू श्री गौतमस्वामी ने भी गुरु शरण स्वीकार की थी । मात्र स्वीकार नहीं, बालक हृदय से पूर्ण समर्पित बने थे ।
- तत्वत्रयी में गुरू को बीच में रखा है । वे ही देव और धर्म का परिचय कराते है ।
- भगवान के विरह में भगवान का शासन लम्बे काल तक चलता है, वह गुरूतत्त्व को आभारी है ।
- भगवान का शासन आत्मा को निर्मल बनाने के लिए सर्वश्रेष्ठ Washing Machine है ।

- अरिहंत परमात्मा का विशेषण होता है–सफलारंभी=जिस कार्य को शुरु करते है वो कार्य अवश्य ही सफल करते है ।
- जो उत्पन्न होता है, नाश होता है और जो हमेशा रहता है वह तत्त्व है ।
- गणधर भगवान बीज बुद्धि के निधान होते हैं । मात्र तीन पद को सुनकर वे 14 पूर्व जितने ज्ञान की रचना करते है ।
- अपने मन के विकल्पों का नाश हो, तभी हम गुरु कृपा के पात्र बन सकते हैं ।
- आज के श्रोताओं की स्थिति पैंदे बिना की बाल्टी के समान है । पानी के अंदर रहने पर तो वह भरी हुई लगती है, लेकिन जैसे ही उसे ऊपर उठाते है, वह खाली हो जाती है । प्रवचन में सब याद रहता हैं, यहां से जाने के बाद सब भूल जाते है ।

- जो ज्ञान आत्मा के लिए हितकारी नहीं है, वह ज्ञान भी मिथ्याज्ञान होने से अज्ञान ही है ।
- सुधर्मास्वामी की छद्मस्थता का समय अधिक था, इसलिए भगवान ने शासन की धूरा सुधर्मास्वामी को सौपी, प्रथम गणधर इन्द्रभूति गौतमस्वामी को नहीं ।
- शासन, केवलज्ञान के आधार पर नहीं चलता है, परंतु श्रुतज्ञान के आधार पर चलता है ।
- आगम शास्त्रों को पू. आर्यरक्षितसूरिजी ने 4 अनुयोगों में विभाजित किया । द्रव्यानुयोग, चरणकरणानुयोग, गणितानुयोग एवं धर्मकथानुयोग ।

- देव लोक से मोक्ष पास में होने पर भी वहां जाने के लिए मनुष्य गति में ही जन्म लेना पडता है ।
- देवता का शरीर खूब अच्छा है, परंतु मन कमजोर होने से वे तप नहीं कर सकते हैं ।
- मानव शरीर सबसे गंदा है । वह अच्छी वस्तु को खराब बनाता है । फिर भी मोक्ष की साधना के लिए मानव शरीर जरुरी है ।
- देवता समृद्धि से अमीर होने पर भी धर्म से गरीब है ।
- नवपद में सिद्ध पद-फल के स्थान पर है ।
- अनादिकाल से आत्मा चार गति रुप संसार में भ्रमण कर रही है ।

- हमें मनुष्य जन्म के साथ देव-गुरु धर्म की सामग्री प्राप्त हुई है, यह हमारा परम पुण्योदय है ।
- कीचड मे फँसा हाथी, ज्यों-ज्यों उसमें से बहार निकलना चाहता है, त्यों-त्यों वह भीतर फँसता जाता है । वैसे ही संसार मे फंसी आत्मा ज्यों-ज्यों उसमें से निकलने का प्रयत्न करती हैं, त्यों-त्यों वह अंदर फंसती जाती है ।
- मनुष्य जन्म को पाकर हमें सद्धर्म की कमाई करनी चाहिये, जो परलोक में साथ में चलेगी ।
- जैसे उत्तम बीज का वपन, उत्तम फल की अपेक्षा रखता है, वैसे ही हमारी सारी आराधना का उत्तम फल सिद्ध पद है ।

- नवपद में से सिद्ध पद निकाल दिया जाय, तो नवपद में कुछ नहीं रहेगा ।
- संसार स्वार्थमय है–ज्यों-ज्यों काल बीत रहा है, त्यों-त्यों स्वार्थ भाव बढ रहा है । इसी कारण आज पांजरापोल एवं वृद्धाश्रम बढे हैं ।
- अरिहंतों के लिए भी सिद्ध परमात्मा वंदनीय है ।
- तीर्थंकर परमात्मा अंतिम भव में स्वयंसंबुद्ध होते हैं । उनके कोई गुरु नहीं होते, परंतु पूर्व के भवों में उन्होंने भी गुरु पद की उपासना की है ।
- जैसे आयंबिल का भोजन निर्लेप है, जल्दी से थाली साफ कर सकते है । वैसे ही सिद्ध परमात्मा भी निर्लेप हैं ।

- तीर्थंकर परमात्मा संसारी अवस्था में माता पिता आदि को नमस्कार करते है, दीक्षा को स्वीकार करते समय सिद्ध भगवंतों को नमस्कार करते है और केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद चतुर्विध श्री संघ को नमस्कार करते हैं ।
- चतुर्विध श्री संघ-पंच परमेष्ठिओं की खान है । इस संघ में बच्चा हो या बूढा, गुणवान हो या गुणहीन, सभी वंदनीय है । आज किसी व्यक्ति में भले कोई विशेष गुण न हो परंतु भविष्य में वह हमसे पहले भी मोक्ष में जा सकता है ।
- व्यापार चाहे किसी भी वस्तु का हो, उसका उद्देश्य तो पैसा कमाना ही है, वैसे ही धर्म क्रिया छोटी हो या बडी हो, आराधना का लक्ष्य तो सिद्ध पद ही है ।

- जो कर्म के परमाणु आत्मा पर चिपकते है, वे द्रव्य कर्म और जिस कारण ये कर्म परमाणु हमारी आत्मा पर चिपकते है, वे राग-द्वेष-भाव कर्म है ।
- कर्मों का बंध, भाव कर्म के आधार पर है । आत्मा में भाव कर्म न हो, तो द्रव्य कर्मबंध नहीं होता है ।
- मनुष्य का जन्म और मरण मात्र ढाई द्वीप अर्थात् 45 लाख योजन में ही होता है । इसलिए सिद्धशिला का विस्तार भी 45 लाख योजन है ।
- ढाई द्वीप में मनुष्य के जन्म स्थान के 101 क्षेत्र है । जिसमें मात्र 15 क्षेत्रों में धर्म का सद्भाव है ।
- सभी को जीना पसंद है मरना किसी को पसंद नहीं है ।

- इन 15 क्षेत्रों में भी मात्र 5 महाविदेह क्षेत्रों में ही हमेशा धर्म का अस्तित्व है । 5 भरत और 5 ऐरावत में मात्र 10% काल में ही धर्म है ।
- जैसे ध्रुव का तारा उत्तर दिशा को सूचित करता है, वैसे ही सिद्ध पद हमें हमारी आराधना का लक्ष्य बताता है ।
- फल प्राप्ति की इच्छा के बिना पागल व्यक्ति भी कोई कार्य नहीं करता है ।
- जीवात्मा की सबसे पहली इच्छा, जीवन जीने की, जो मात्र मोक्ष में ही शक्य है । दूसरी इच्छा सुख पाने की है । शाश्वत सुख मात्र मोक्ष में ही है । कर्म रहित सुख ही शाश्वत है, पुण्य से जो सुख प्राप्त होता है, वह अल्पकालीन होता है ।

- संसार का सुख पुण्य के उदय से प्राप्त होता है, जो पाप बंध कराता है ।
- संसार का सुख अधुरा है, परपीडाकारी है, पराधीन है, परिणाम में दु:खदायी है । विनाशी है और मात्र दु:ख के प्रतिकार रुप है ।
- दानादि चार प्रकार के धर्मों में सबसे कठिन 'भाव धर्म' है ।
- दान शील और तप के द्वारा ही भाव धर्म की साधना हो सकती है । भाव धर्म मन का विषय है और मन पूरे शरीर में व्याप्त है ।
- दुनियाँ में सब अच्छा प्राप्त होना कठिन है । दीपक के साथ उसी के नीचे अंधेरा होता है, गुलाब के साथ कांटें, कमल के नीचे कीचड होता है ।

- मन को वश करना सबसे कठिन है । मन को बांधने का साधन, सालंबन ध्यान है और सालंबन ध्यान के लिए सर्व श्रेष्ठ नवपद है ।
- सुख का भोग दु:ख की आमंत्रण पत्रिका है ।
- पंच परमेष्ठी के केन्द्र में अरिहंत है, परंतु बीच में आचार्य है ।
- केवली और 14 पूर्वी आत्माएँ भी परमात्मा की देशना अवश्य सुनते है ।
- परमात्मा का साक्षात् संग तो नहीं हो सकता है । परन्तु सद्गुरू के पास परमात्मा और परमात्मा के शासन को समझा जा सकता है ।

- दान, शील और तप करने पर भी यदि मन में मलिन भाव हो तो हम वास्तविक फल से वंचित रह जाते हैं ।
- व्यापारी का सबसे ज्यादा पाप धन के लिए होता है । धन, पत्नी, पुत्र और शरीर के लिए किये हुए सारे पाप अकेली आत्मा को ही सहन करने पड़ते है ।
- शरीर को स्वस्थ रखने के लिए व्यक्ति हर पाप करने के लिए तैयार हो जाता है । फिर भी परलोक मे वह शरीर साथ में नहीं आता हैं ।
- धन की ममता तिर्यंच और एकेन्द्रिय में भी है ।
- धन की मूर्छा तोड़ने के लिए दिया दान ही सच्चा दान धर्म है ।

- इन्द्रियों के सुख की मूर्च्छा तोड़ने के लिए शील धर्म बताया है । दान से भी शील श्रेष्ठ है ।
- शरीर के प्रति रही आसक्ति को तोड़ने के लिए किया गया तप ही सच्चा तप धर्म है ।
- पानी का घड़ा आधा हो, तब छलकता है, परंतु पूर्ण होने पर नहीं छलकता इसलिए परमात्मा जब तक पूर्णता को प्राप्त नहीं करते, वीतराग बनकर केवलज्ञान प्राप्त नहीं करते तब तक पूर्णरुप से मौन रहते है ।
- केवलज्ञान के बाद देवों द्वारा निर्मित समवसरण में बैठकर प्रभु अर्थ की देशना देते है, जिसे गणधर भगवन्त सूत्र के रुप में गूंथते हैं ।

- परमात्मा के मुख से 14 अक्षर रूप त्रिपदी सुनकर गणधर भगवंत समग्र श्रुतज्ञान रूप 12 अंगों की रचना करते हैं ।
- जैसे बीज में पूरा वृक्ष समाया है, वैसे ही त्रिपदी के 14 अक्षरों में समग्र श्रुतज्ञान समाया हुआ है ।
- केवलज्ञान का आदान–प्रदान नहीं हो सकता, मात्र श्रुतज्ञान का ही आदान प्रदान हो सकता है ।
- सर्वार्थसिद्ध विमानवासी देवों से भी गणधर भगवंत और तीर्थंकरों का पुण्य ज्यादा होता है ।
- तीर्थंकर भगवन्त दिन के प्रथम प्रहर और अंतिम प्रहर में देशना देते हैं ।

- जिस दिन गणधर भगवन्त मुनि बनते है, उसी दिन आचार्य पदारूढ़ हो जाते हैं ।
- दीक्षा परमात्मा देते हैं, परन्तु सारणा, वारणा, चोयणा और प्रतिचोयणा रूप अनुशासन का कार्य छद्मस्थ गणधर ही करते हैं ।
- सुधर्मास्वामी सभी सूत्रों में यही उल्लेख करते है कि ये मैं जो पदार्थ कह रहा हूँ, वे सब मैंने भगवान के पास सुने है ।
- निर्ग्रंथ गच्छ, कोटि गच्छ, चन्द्र गच्छ, वनवासी गच्छ, वड़गच्छ तथा तपागच्छ रूप नाम बदले परन्तु परमात्मा के वंश की अखंड परम्परा आज भी हमें प्राप्त हुई है ।

- तपागच्छ के नाम से जाना जाने वाले इस गच्छ का नाम जिस महापुरुष के कारण पड़ा ऐसे जगच्चन्द्रसूरीश्वरजी म.सा. हुए ।
- श्री वज्रस्वामी ने पालने में झूलते हुए 11 अंगों का ज्ञान प्राप्त किया था । पूज्य बप्पभट्टीसूरिजी एक दिन में 1000 गाथाएँ याद कर सकते थे ।
- चिंतामुक्ति का रामबाण इलाज परमात्मा की वाणी है ।
- जिन्हें श्रुतज्ञान का विशिष्ट क्षयोपशम हो, वे शासन के श्रेष्ठ सितारा बन सकते हैं ।
- पूज्य विजयानंदसूरीश्वरजी एक दिन में 300 गाथाएँ याद कर सकते थे ।

- जिस समय जो परिस्थिति हो उसमें अपने मन को ढाल देना समाधि है ।
- मानव जीवन को पाकर जिसने धर्म की आराधना नहीं की, उसका मनुष्य जन्म निष्फल है ।
- भगवान या भगवान का शासन, जब तक विद्यमान है, तब तक धर्म हो सकता है ।
- जीवों के कल्याण हेतु तीर्थ और तीर्थंकर का आलंबन है ।
- तीर्थंकर और उनका शासन मात्र 15 कर्मभूमियों में ही हो सकता है, अकर्मभूमि में मात्र युगलिक है । उनके जीवन में धर्म नहीं है तो अधर्म भी नहीं है । युगलिक क्षेत्र मात्र भोग भूमि है ।

- मात्र शासन मिलने से आत्म कल्याण नहीं हो सकता । आत्म कल्याण के लिए शासन की आराधना जरुरी है ।
- मोक्षमार्ग बताने से बड़ा कोई उपकार नहीं है ।
- तीर्थंकर की तरह सद्गुरु भगवन्त भी सभी जीवों पर भाव उपकार करते है ।
- परमात्मा के साधु-कंचन और कामिनी के संग के त्यागी होते है ।
- पैसे के बिना आराम से जीवन जिया जा सकता हो ऐसा निर्दोष जीवन परमात्मा ने साधु धर्म के रूप में बताया है ।
- गृहस्थ जीवन में धन जरुरी है फिर भी आवश्यकता के अनुसार मर्यादा होनी चाहिए ।

- निष्काम भाव से किया हुआ पुण्य, अर्थ और काम के सर्वश्रेष्ठ साधन देता है ।
- चक्रवर्ती के पास भी जो ऋद्धि सिद्धि और समृद्धि नहीं होती है, उससे भी श्रेष्ठ समृद्धि तीर्थंकर के पास गृहस्थ अवस्था में होती है । फिर भी दीक्षा लेते समय उसका त्याग करते हैं ।
- श्रावक जीवन में संपूर्ण रूप से पाप का त्याग नहीं है, फिर भी पापों का परिमाण अवश्य करना है ।
- भगवान ने पहले साधु धर्म बताया, परन्तु साधु जीवन को स्वीकार करने का जिसमें सामर्थ्य नहीं है, उसके लिए (गृहस्थ) श्रावक धर्म भी बताया है ।

- इस काल में मोक्ष शक्य नहीं है, फिर भी एक, दो या तीन भव में मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है । उदा. अनुपमा देवी, कुमारपाल ।
- संपूर्ण निरतिचार संयम का पालन आज शक्य नहीं है फिर भी जितना पालन हो सके उतना अवश्य करना चाहिए ।
- जैन शासन में धन को पूर्ण रूप से पाप माना गया है, जिसके लिए साधु जीवन में धन का संपूर्ण त्याग है । श्रावक जीवन में धन का पूर्णतया त्याग नहीं है, फिर भी उसका परिमाण अवश्य करना है ।
- श्रावक चौथे और पाँचवे पाप का पूर्ण रूप से त्याग या पालन न कर सके तो भी धर्म को प्रधानता देकर इन पापो में भी परिमाण अवश्य करे ।

- दुनियां मानती है, धन की प्राप्ति पुरुषार्थ से होती है, जबकि जैन धर्म के अनुसार धन की प्राप्ति का मुख्य कारण पुण्य है, जिसका साधन धर्म की आराधना है ।
- दिया हुआ दान कभी निष्फल नहीं जाता है । व्यक्ति चाहे विदाई ले ले, फिर भी दान का फल–परलोक में अवश्य प्राप्त होता है ।
- भगवान के धर्म की आराधना जन्म, जरा और मृत्यु का निवारण करने वाली है ।
- वह व्यक्ति मूढ़ है, जो देवों को भी दुर्लभ ऐसे मानव भव को प्राप्त करके धर्म आराधना के बिना व्यर्थ गवाँ देता है ।

- संसार का सुख पुण्य के आधार पर है और पुण्य का कोई विश्वास नहीं । पूर्वभव का पुण्य कब और कहा पूरा हो जाएगा कुछ भी पता नहीं है ।
- असंख्य समकिती देव भी मनुष्य बनने की झंखना करते है । मिथ्यात्वी देव तो प्रायः कर एकेन्द्रिय जाति के पृथ्वीकाय, अपकाय और वनस्पति काय में पैदा होते है ।
- पुरुष को अहंकार सताता है, स्त्री को अलंकार का राग सताता है ।
- देवलोक में जन्म लेने मात्र से अमाप संपत्ति प्राप्त हो जाती है, फिर भी व्यक्ति इस लोक में सुखी होने के लिए धर्म को भूल जाता है ।

- जिसको अलंकारों में आसक्ति होती है, वे पृथ्वीकाय में जाते है । जिसको बार-बार स्नान करने, पानी में डुबे रहने की इच्छा होती है, वे अप्काय में जाते है और जिनको बाग बगीचें पसंद होते है, वे वनस्पतिकाय में जाते है ।
- आज अधिकांश लोगों की मान्यता है कि पैसे वाले सुखी है और इसी कारण अपना पूरा जीवन धन के लोभ में पूरा कर देते हैं ।
- व्यक्ति सोना पाने के लिए पागल बनता है, परन्तु वह सोना मिलने के बाद उस व्यक्ति का सोना (नींद) हराम हो जाता है ।
- जिस धर्म की आराधना मनुष्य कर सकता है, दीर्घ आयुष्य वाले देवता भी वह आराधना नहीं कर सकते है ।

- जब तक शरीर सुंदर होता है, तब तक ही व्यक्ति कांच में चेहरा देखता है परन्तु बुढ़ापा आने के बाद वह चेहरा भयंकर हो जाता है तब उसे देखने का भी मन नहीं होता ।
- जीवन में दु:ख आने पर अपने दुष्कृतों की निंदा करो और सुख आने पर उसमें, लीन नहीं होने के लिए अन्य के सुकृतों की प्रशंसा करो ।
- तप नहीं कर सको तो तपस्वी को सहायता करनी चाहिए । सहायता करने से अपने तप के अंतराय क्षय हो जाते हैं ।
- सुकृत करके उसका यश लेने की इच्छा हमें अहंकारी बनाएगी । देव-गुरू को यश देने पर अभिमान नहीं बढेगा और उनके उपकारों का भी स्मरण होगा ।

- जो अपने आप को शून्य मानता है वही पूर्ण बन सकता है परन्तु जो अपने आप को पूर्ण मानता है, वह हमेशा शून्य रहता है ।
- आज हम जो कुछ भी पा सके है उसमें अरिहंतों का ही सर्वश्रेष्ठ उपकार है ।
- भारत के 50% लोग शिक्षित होंगे फिर भी आत्मा के विषय में अधिकांश लोग अशिक्षित ही है ।
- स्वाद के सुख को पाने के लिए कितनी पराधीनता ? भोजन का कच्चा माल व्यवस्थित होना चाहिए, बनानेवाला जानकार होना चाहिए, इन्धन आदि भी पूर्ण मात्रा में होना चाहिए, शारीरिक क्षमता भी होनी चाहिए आदि । एक इन्द्रिय के सुख को पाने के लिए अनेक पराधीनता चाहिए ।

- बाजार से प्राप्त होने वाली सारी वस्तुओं में व्यक्ति असली नकली की जानकारी प्राप्त करता है । हर व्यक्ति को असली माल पाने की ही चाहना होती है । नकली माल किसी को पसंद नहीं है । पूरी दुनिया को हर वस्तु असली चाहिए परन्तु आश्चर्य है कि सुख के विषय में पूरी दुनिया भ्रमित होकर नकली सुख ही पाना चाहती है ।
- संसार का सुख पुण्य पर निर्भर है । पुण्य यदि साथ देता है तो जंगल में भी सुख सामग्री मिल सकती है और यदि पुण्य का साथ छूट जाय तो महलों में भी प्रतिकूलता सहन करनी पड़ती है ।
- संसार का सुख क्षणिक है । सुख की सामग्री मिलने के बाद भी वह सामग्री नाशवंत है ।

- प्रतिदिन प्रातः राई प्रतिक्रमण में हम महापुरुष और महासतिओं के नामस्मरण करते है । महापुरुष का नाम हमें सत्त्वशाली बनाता है तो महासती का नामस्मरण हमें पवित्र बनता है ।
- परस्त्रीगमन और वेश्यागमन के कारण आज दुनिया में Aids की बीमारी बढ़ी है, जिससे बचने के लिए विदेशों में भी स्वदारा संतोष की वृत्ति बढ़ी है ।
- कंडरिक मुनि 1000 वर्षो तक संयम जीवन पालन करने के बाद मात्र थोडे समय के लिए इन्द्रिय–के सुखों में लंपट बने तो मरकर सातवीं नरक में चले गए ।
- संसार का सुख, दुःख मिश्रित है । सारे भोगों के साथ रोग जुड़े है ।

- प्रतिवासुदेव रावण के अंतःपुर में हजारों स्त्रियां थी, फिर भी सीता के रूप में पागल बना तो मौत हुई और मरकर चौथी नरक में चला गया ।
- संसार का सुख कंटाला जनक है । मनपसंद एक ही वस्तु को बार बार भोग करने के बाद उसी से कंटाला आ जाता है ।
- जीवन में होने वाले सारे पाप, सुख को पाने के लिए होते है ।
- संसार के सुख को पाने के लिए पाप करना पड़ता है, साथ ही संसार के हर सुख के आगे–पीछे दुःख ही होता है ।
- भूख की पीड़ा हो तो ही मिठाई हमें सुख दे सकती है । परन्तु भूख नहीं है तो वही वस्तु दुःख का कारण बन जाती है ।

- शरीर को कितना भी संभालो, वह एक दिन बिगड़नेवाला ही है । शरीर तो एक भव में साथ छोड़ देता है, परन्तु मार तो आत्मा को ही खानी पड़ती है ।
- सुख को पाने के लिए हर व्यक्ति जवान रहना चाहता है, परन्तु काल किसी को हमेशा जवान रहने नहीं देता है ।
- संसार के सुख के पीछे दो कलंक अवश्य लगे है । प्राप्त सुख एक दिन अवश्य छोड़ना पड़ता है । स्वेच्छा से सुख को छोड़े तो इज्जत बढ़ती है और न छोड़े तो इज्जत घटती है ।
- जो नाशवन्त सुख को पाने के लिए शाश्वत सुख को छोड़ देता है वह सोने की थाली में धूल भरता है, कौएं को उड़ाने के लिए चिंतामणी रत्न फेंकता है ।

- संसार के हर सुख के साथ भय जुड़ा है इसलिए तारक परमात्मा ने संसार के सुख को छोड़ने की आज्ञा की है ।
- अनादिकाल के अभ्यास के कारण हमारा मन सूअर जैसा हो गया है ।
- सूअर दूधपाक को छोड़कर विष्टा में ही अपना मुँह डालता है, वैसे ही परमात्मा के धर्म को छोड़कर हमारा मन विष्टा समान संसार के भौतिक सुखों में खुश होता है ।
- श्रावको के लिए एक ओर पूजा का समय हो और उसी समय प्रवचन भी हो तो प्रवचन को ही प्रधानता देनी चाहिए । प्रवचन के श्रवण से जीवन की दशा और दिशा बदल सकती है ।
- श्रावक यदि सशक्त है तो उसे प्रतिदिन एक बार भोजन करना चाहिए ।

- साधु जीवन में भी साधुओं के लिए प्रतिदिन एकासना करने की आज्ञा है ।
- जो श्रवण करे वह श्रावक । घर पर पत्नी की, दुकान पर शेठ या व्यापारी की बात सुने वह श्रावक नहीं, परन्तु जो जिनवचन सुने, वह श्रावक है ।
- वैराग्य को दृढ़ बनाने के लिए जिनवाणी का श्रवण अवश्य करना चाहिए ।
- दूसरों के प्रति आया हुआ थोड़ा सा भी दुर्भाव हमारे क्षायोपशमिक भाव के गुणों को नष्ट कर सकता है ।
- कलियुग में भी प्रभु शासन से जो रक्षित है, वह सुखी है ।

- उपशम श्रेणी पर चढ़ी आत्मा 11 वें गुणस्थानक पर पहुँच जाती है । वे वीतराग तुल्य होते हैं, परन्तु उस गुण स्थानक पर अन्तर्मुहूर्त से ज्यादा नहीं रह सकते । अवश्य पतन होता है ।
- क्षायोपशमिक भाव के गुण आते है और जाते है । क्षायोपशमिक भाव का समकित ज्यादा से ज्यादा 66 सागरोपम तक रह सकता है, बाद में अवश्य जाता है ।
- जैनागमों के रहस्यों को समझने के बाद पूज्य हरिभद्रसूरिजी कहते है कि 'यदि ये जिनागम नहीं होते तो मैं अनाथ हो जाता ।'
- मन, वचन और काया के पापों में सबसे खतरनाक है मन के पाप । परन्तु मन के पापों की आलोचना तो हम लेते नहीं है । मन को साफ करने के लिए हमें मन के पापों की भी आलोचना लेनी चाहिए ।

- अजैनो की कथाओं के अन्त मे 'मात्र खाया, पीया और राज किया' की बात आती है, जबकि जैन कथाओं के अंत में दीक्षा स्वीकार और मोक्ष की बात होगी ।
- हम जो दृश्य देखते है, सुनते है, पढ़ते है, वे हमारे हृदय और जीवन को अवश्य प्रभावित करते है ।
- 5 इन्द्रिय के विषयभोग और 5 प्रकार के कषायों का सेवन हमारे संसार की वृद्धि कराने वाले है ।
- क्षायोपशमिक भाव के गुणों को टिकाएं रखने के लिए जिनवाणी का श्रवण अवश्य करना चाहिए ।
- मोक्ष मार्ग की बातें सभी को पसंद नहीं पड़ती है । जिसको मोक्ष पाने की तमन्ना हो उसी को मोक्ष की बातों में रुचि होगी ।

- श्रावक को धर्म मार्ग में आगे बढ़ने के लिए देव और गुरु दोनों का आश्रय लेना है । मात्र देव या मात्र गुरु का आश्रय लेने से कभी आत्म–कल्याण नहीं हो सकता है ।
- आठों कर्मों से मुक्त सिद्ध भगवान है फिर भी नवकार में सबसे पहले अरिहंत को नमस्कार किया है, क्योंकि सिद्ध पद की भी जानकरी अरिहंतों के माध्यम से ही होती है ।
- केवलज्ञान के द्वारा सिद्ध पद को देखकर जिस मार्ग पर वे चले है ऐसा मोक्ष मार्ग अरिहंत बताते है ।
- जीव मात्र की एक इच्छा है, मेरा दु:ख दूर हो और मुझे सुख प्राप्त हो ।

- सुख की ही इच्छा होने पर भी संसार में रही जीवात्मा सुख को प्राप्त नहीं कर सकती है । संपूर्ण सुख एक मात्र मोक्ष में है ।
- समुद्र का पानी सभी जगह से खारा है, नीम के पत्ते हर जगह कड़वे ही है । उसी प्रकार संसार हर स्थान पर दु:खों से भरा है ।
- संसार – दु:ख रूप है, दु:ख फलक है और दु:ख के ही अनुबंध वाला है ।
- मोक्ष के जीव के एक आत्मप्रदेश में जो सुख है उसकी तुलना संसार के सभी सुखों को अनंतीबार वर्ग करने पर भी नहीं हो सकती है ।
- जो व्यक्ति जितना ज्यादा ऊँचा होता है, उतना उसका ज्यादा सन्मान करना चाहिए ।

- अनादिकाल से हमारी आत्मा अव्यवहार राशि की निगोद में ही थी । निगोद में 256 आवलिका का आयुष्य है । 48 मिनिट में उनके 65536 भव हो जाते है ।
- निगोद के अपार दु:खों से मुक्त कराने में सर्वाधिक उपकार सिद्ध भगवान का है । परन्तु वहाँ से निकलने के बाद जो भी आत्मविकास हुआ है, वह अरिहंत भगवान के आभारी है ।
- द्रव्य पूजा मात्र श्रावक ही कर सकते है, साधु को भाव पूजा ही करनी है । परमात्मा की आज्ञा का पालन करना ही सर्वश्रेष्ट भाव पूजा है ।
- अरिहंत भगवान शाश्वत सुख के मार्ग बताने वाले होने से स्थायी उपकार करने वाले है ।

- पूज्य तत्त्वों की भक्ति करते समय जो बाहर से हिंसा होती है, वह मात्र स्वरूप हिंसा है, परमार्थ से वह हिंसा नहीं है । अनुबंध से वह अहिंसा ही है ।
- परमात्मा के जन्म एवं दीक्षा कल्याणक के समय 64 इन्द्र भी भगवान का सचित्त जल से ही स्नान करते है ।
- जहा दु:ख का पार नहीं वह संसार और जहाँ दु:ख का नामोनिशान नहीं वह मोक्ष है ।
- परमात्मा की भक्ति करने के लिए साक्षात् परमात्मा हमारे पास में नही हैं, फिर भी उनकी प्रतिमा के माध्यम से हम परमात्म भक्ति कर सकते हैं ।
- हमारे जीवन पर संगति का प्रभाव पड़ता है ।

- तारक परमात्मा नाम, आकृति, द्रव्य और भाव–चारों निक्षेपों से हम पर उपकार करते हैं ।
- परमात्मा के नाम स्मरण से हमारे दु:ख दर्द और पापों का क्षय हो जाता है ।
- परमात्मा की पूजा, उपसर्गों का क्षय करती है, विघ्न की लताएं नष्ट हो जाती है और मन प्रसन्न हो जाता है ।
- स्थापना के रूप में मिले परमात्मा को हमें साक्षात् रूप में ही मानना है ।
- मंदिर में जाते समय मन, वचन और काया को एकाग्र करना चाहिए और मन, वचन, काया और धन का यथाशक्ति अर्पण भी करना चाहिए ।

- परमात्मा और हमारी आत्मा में द्रव्य की अपेक्षा कोई भेद नहीं है, फिर भी वे कर्म से सर्वथा मुक्त है और हम कर्मों के बंधनों से बंधे हुए है ।
- अन्य धर्मों में भगवान का अवतारवाद माना है जबकि जैन धर्म हर आत्मा को परमात्मा बनने का अधिकार देता है । इसी कारण अमेरिका के जोर्ज बर्नाड शॉ, अपने पुनर्जन्म के रूप में भारत देश और जैन धर्म को पाना चाहते है ।
- आज तक अनंती चौबीसी हुई है और भविष्य में भी अनन्त चौबीसी होगी ।
- विदेशी शिक्षण के कारण हमारे यहाँ यही सीखाते हैं कि जैन धर्म की स्थापना भगवान महावीर ने की है । जबकि जैन धर्म अनादिकाल से है और अनन्त काल तक चलेगा ।

- भगवान के जिनालय में संसार के कोई भी कार्य नहीं करने चाहिए । उनसे यदि संबंध जोड़ना हो तो संसार के साथ संबंध तोड़ना ही पड़ेगा ।
- भगवान को खमासमण देते समय हमें 17 प्रकार से प्रमार्जन करना चाहिए ।
- जैन शासन में सर्वानुमति और बहुमति मान्य नहीं है, मान्य है मात्र शास्त्रमति ।
- श्रावक–श्राविकाओं को भी राई प्रतिक्रमण में दो बार, देवसीय प्रतिक्रमण में दो बार एवं त्रिकाल पूजा में 3 बार चैत्यवंदन, इस प्रकार 7 बार चैत्यवंदन की आज्ञा है ।

- साधु-साध्वीजी को दिन में 7 बार चैत्यवंदन करने की आज्ञा है । राई प्रतिक्रमण में दो बार 1. जगचिंतामणी से जयवीयराय तक, प्रारम्भ में और 2. छह आवश्यक की पूर्ति के बाद विशाल लोचन से चार थोय का देववंदन ।

  इसके बाद परमात्मा के जिनालय में 1 बार, पच्चक्खाण पारते समय 1 बार, गोचरी वापरने के बाद 1 बार, चैत्यवंदन और देवसी प्रतिक्रमण में 1 बार 4 थोय का देववंदन और 1 संथारा पोरिसी में ।

- सद्गृहस्थ अपने पास में द्रव्य रूप धन लेकर बैठे है, इसलिए जिनालय में जाकर उसे सबसे पहले द्रव्य पूजा करनी चाहिए ।

- दुनिया में रहे 1500 से अधिक धर्मों में सर्वश्रेष्ठ धर्म, जैन धर्म है, जो कष, छेद और तप की परीक्षा से शुद्ध है ।

- वर्तमान में भरतक्षेत्र से परमगति शक्य नहीं है, फिर भी पुनर्जन्म में पुनः धर्म की प्राप्ति हेतु पुण्य का भाता अवश्य बांध लेना चाहिए ।

- मृत्यु होने के बाद इस लोक की सामग्री के साथ संबंध टूट जाता है ।

- हमें सुख मिलने पर हमारे पास वालों को भी सुख का अनुभव नहीं होता है, जबकि भगवान के जन्म समय सातों नरक के जीवों को क्षण भर के लिए सुख का अनुभव होता है ।

- हमारा जन्म तो दुःखदायी है । परंतु हम पूरी जिंदगी रोते रहते है जबकि भगवान जन्म में भी हंसते है, जीवन में भी हंसते रहते है और निर्वाण भी हंसते हुए स्वीकार करते हैं ।

- परमात्मा का हमारी आत्मा पर सबसे बड़ा उपकार यही है कि उन्होंने हमें मोक्ष पाने का सच्चा स्वरूप बताया है ।
- आत्मा की सच्ची संपत्ति की पहचान परमात्मा ने करायी है ।
- भगवान कहते है, *'तेरी आत्मा भी मेरे जैसी है'* बस, मात्र कर्मों के आवरण का भेद है । जिस आवरण को दूर करने के लिए संयम धर्म की साधना है ।
- अतीत, अनागत और वर्तमान के सभी तीर्थकरों की धर्मदेशना शब्द से अलग हो सकती है, अर्थ से तो एक ही होती है ।
- अन्य धर्मों की स्थापना एक-एक व्यक्ति से हुई है, परन्तु जैन धर्म शाश्वत है ।

- प्रभु का मार्ग पसंद नहीं पडा क्योंकि प्रभु के वचनों पर श्रद्धा नहीं है ।
- आज सामूहिक धर्म आराधना खूब घटी है, परन्तु T.V. आदि के माध्यम से सामूहिक पाप खूब बढ़ा है । जिसके परिणाम स्वरूप पाप का उदय भी एक साथ में आता है ।
- पूज्य आनंदघनजी म.ने परमात्मा की चार प्रकार की पूजा बताई है । अंग, अग्र, भाव और प्रतिपत्ति पूजा ।
- भगवान की आज्ञा का पूर्ण रूप से पालन करना ही प्रतिपत्ति पूजा है ।
- परमात्मा की भक्ति के बाद सद्गुरु भगवन्त की भक्ति करनी चाहिए ।

- प्रभु की आज्ञा का पूर्ण पालन मात्र साधु जीवन में है । श्रावक चाहे जितनी जीवदया का पालन करे, वह सर्व जीवों को अभयदान नहीं दे सकता है ।
- श्रावक जीवन में हिंसा का त्याग जरूर है, परन्तु मात्र निर्दोष जीवों की जान बूझकर हिंसा का ही त्याग है ।
- परमात्मा के प्रभाव से पूरा प्रकृति मंडल बदल जाता है । पूरा प्रकृति मंडल भगवान की सेवा कर रहा हो, ऐसा अनुकूल बन जाता है ।
- परमात्मा के मात्र 34 अतिशयों का ज्ञान भी हमें परमात्मा के प्रति भक्ति प्रकट कराने में समर्थ है ।
- जहाँ पर आंख जाती है वहां मन अवश्य जाता है ।

- जन्म से अजैन होने पर भी कुमारपाल महाराजा ने परमात्मा का वास्तविक स्वरूप जाना था, इसलिए वे प्रतिदिन 1800 करोडपतिओं के साथ स्नात्र महोत्सव करते थे । 14 साल धर्म की आराधना से गणधर नाम कर्म का बंध किया था ।
- परमात्मा की द्रव्य पूजा में उत्तमोत्तम द्रव्य का उपयोग करने से हमारे चारित्र मोहनीय कर्मों का क्षय होता है ।
- श्रावक बाजार से जब एक नया कपड़ा खरीदे तब जिनालय के लिए एक अंगलूछना का वस्त्र भी अवश्य खरीद कर परमात्म भक्ति करे ।
- परमात्मा के सारे अंग पूजनीय और पवित्र हैं । आंखें निर्विकारी हैं ।

- श्रावक और साधुओं को प्रत्येक क्रिया गुरू की निश्रा में करनी चाहिए ।
- संवेगरंग शाला ग्रंथ में आचार्य के 36 x 36 = 1296 गुण बताए है ।
- उत्तर गुणों के अभाव में भी मूल गुण तो खूब जरूरी है । महाव्रतों के पालन में कोई ढील नहीं चल सकती है ।
- सिद्धराज के दो दोष (i) परस्त्रीगमन और (ii) कायरता से 98 गुण भी ढंक जाते थे । कुमारपाल के दो गुण (i) परनारी सहोदरता एवं (ii) शौर्य गुण से 98 दोष भी ढंक जाते थे ।
- तीर्थंकर के विरह में आचार्य को तीर्थंकर के तुल्य माना है, मात्र उनकी शुद्ध प्ररूपणा के गुण से ।

- कोर्ट में न्यायाधीश (Judge) भी देश के संविधान से बंधा हुआ है, वैसे ही आचार्य भी अरिहंत परमात्मा की प्ररूपणा से बंधे हुए है ।
- मनुष्य की सुरक्षा के लिए दीवार और छत जरूरी है वैसे आत्मा की सुरक्षा के लिए व्रत नियम की दीवार के साथ सद्गुरू की छत्र छाया जरूरी है ।
- कोई भी कार्य होता है, उसमें निमित्त कारण प्रत्यक्ष दिखता है, परंतु मुख्य कारण तो कर्म ही है ।
- सत्य बातें कडवी होने के कारण सामान्य रुप से किसी को पसंद नहीं पडती है ।

- लोक प्रवाह का त्याग करके जो सत्य पर अडिग रहता है, वही श्रेष्ठ है ।
- आचार्य जैन शासन के राजा है, तो उपाध्याय उनके मंत्री समान है ।
- सामान्य से उपाध्यायजी भगवंत ज्ञान स्वरूप 25 गुण के धारक है, परंतु विशेष रुप से विनय गुण के भंडार है ।
- तीर्थंकर भगवान केवलज्ञान द्वारा अभिलाप्य एवं अनभिलाप्य भावों को जानते है, परंतु मात्र अभिलाप्य भावों को ही शब्द देह दिया जा सकता है, अभिलाप्य भावों का भी अनंतवां भाग ही देशना के रुप में कह सकते है ।

- श्रुतकेवली 14 पूर्व श्रुत के ज्ञाता होने से, जो देशना केवली दे सकते है, वह देशना श्रुतकेवली भी दे सकते है ।
- आंख के सबसे बड़े दो दोष, दोष दृष्टि और दृष्टि दोष है ।
- धार्मिक क्रियाओं में आनंद नहीं आता है, जिसका मुख्य कारण है कि क्रिया करते समय सूत्र एवं उसके अर्थ में उपयोग नहीं है ।
- देहालय को देवालय बनाना है, जिससे आज्ञा चक्र पर अरिहंत का ध्यान करते हुए प्रभु आज्ञा पालन के बल की प्रार्थना करनी है ।
- शिखा के भाग पर सहस्त्रदल कमल में सिद्ध भगवंतों का ध्यान करते हुए निर्लेपता की प्रार्थना करनी है ।
- कंठ में आचार्य भगवंतों का ध्यान करते हुए सदाचार पालन की प्रार्थना करनी है ।

- हिंसा, झूठ, चोरी आदि पापों से जैन शासन की अपभ्राजना में निमित्त बनना बहुत बडा पाप है ।
- हृदय कमल में उपाध्याय भगवंतों का ध्यान करते हुए विनय गुण की प्रार्थना करनी है तो केन्द्र में साधु भगवंतों का ध्यान करते हुए वैराग्य गुण की प्रार्थना करनी है ।
- समग्र जैन शासन का सार नवपद है । नवपद के बिना जैन शासन शून्य है । नवपद की आराधना से जीव अपनी आत्मिक समृद्धि का मालिक बनता है ।
- नवपद के दूसरे वलय में ही वर्ण मातृका का पूजन होता है । परंतु आज अक्षरों की घोर आशातना हो रही है । अक्षरों पर बैठना, फेंकना, फाडना अथवा थूंक लगाना, पंखे आदि बनाना ये ज्ञान की आशातनाएं है ।

- ज्ञान, ज्ञानी और ज्ञान के साधन की आशातना करने से आत्मा के ज्ञान गुण पर आवरण आता है ।
- जो आत्मा तप, जप और ब्रह्मचर्य पालन पूर्वक नवपद की आराधना करती है, उसके लिए आज भी नवपद कल्पवृक्ष के समान है ।
- जो क्षमावान है, जो इन्द्रियों का दमन करता है और जो मन से शांत है, वही नवपद की आराधना का अधिकारी है ।
- तप से जीवन में संतोष भाव आना चाहिए । परंतु तप करने पर भी जहाँ गुस्सा आता हो तो वह तप का अजीर्ण कहलाता है ।
- जो हर परिस्थिति में अपनी मन: स्थिति को स्थिर करता है, वह हर जगह सुखी होता है ।

- नवपद के बीच में रहा हुआ साधु पद, पंच परमेष्ठी का प्रवेश द्वार है ।
- अन्य व्यक्ति को साधु जीवन स्वीकार किये बिना केवलज्ञान और मोक्ष प्राप्त हो सकता है, परंतु तीर्थंकरों को संयम जीवन स्वीकार किये बिना कभी केवलज्ञान नहीं हो सकता ।
- तीर्थंकरों को दीक्षाकल्याणक के बाद ही केवलज्ञान हो सकता है ।
- मरुदेवा माता आदि ने द्रव्य से साधु पद स्वीकार नहीं किया था, परंतु भाव से तो वे साधु ही थी ।
- धन, स्वजन, परिवार, सुख के साधन आदि का त्याग करने पर भी साधुजीवन में शरीर के प्रति रहे ममत्व का त्याग करना होता है ।

- युद्ध विराम के समय शांति के प्रतीक सफेद झंडा लहराते है । साधु जीवन में भी सफेद वस्त्र शांति का प्रतीक है ।
- साधु जीवन के स्वीकार करने के बाद मात्र मस्तक के बालों का ही लोच नहीं करना है, परंतु विषय कषायों का भी लोंच करना है ।
- आचार्य जिनशासन के आराधक, प्रभावक और रक्षक होते हैं ।
- पांच इन्द्रियों के विषय और चार प्रकार के कषाय ही हमारे संसार के मुख्य कारण है ।
- साधु के आचार मात्र से जैन शासन को अनेक महापुरुषों की भेंट प्राप्त हुई है । *'गोचरी पर अधिकार गुरु भगवंत का है'* इस आचार से जैन शासन को संप्रति राजा प्राप्त हुए ।

- नीची नजर से गोचरी वोहरते साधु को देख इलाची कुमार को केवलज्ञान प्राप्त हुआ था ।
- अकेली इन्द्रिय से पाप नहीं होता, मन मिलने से ही पाप होता है ।
- आत्मा के भीतरी अज्ञान के अंधकार को दूर करें वे गुरु कहलाते हैं ।
- ज्ञान, दर्शन और चारित्र आत्मा के सच्चे तीन खजाने है ।
- शासन प्रभावना अर्थात् अजैनों के हृदय में भी जैन धर्म की स्थापना करना ।
- देव और गुरू को भी परीक्षा करके स्वीकार करना है ।

- आने वाले श्रद्धालु को सबसे पहले सर्व विरति का उपदेश देना चाहिए, उसके लिए तैयार न हो तो देश विरति का उपदेश और अंत में यदि उसके लिए भी तैयार न हो उसे समकित, मार्गानुसारिता आदि का उपदेश देना चाहिए ।
- स्थापना निक्षेप और भाव निक्षेप में परमात्मा की भक्ति अलग अलग प्रकार से होती है । भाव निक्षेप के अभाव में हमें स्थापना निक्षेप के आलंबन रूप भक्ति करनी है ।
- परमात्मा के शासन में तीर्थंकर सूर्य के समान है, केवलज्ञानी चन्द्र के समान है ।
- केवलज्ञान की प्राप्ति होने पर भी, केवली स्वयं अपने मुख से कभी नहीं कहते कि मुझे केवलज्ञान हुआ है ।

- छोटी सी दवाई भी बडी वेदना को दूर करने में समर्थ है वैसे ही परमात्म शासन के छोटे से अनुष्ठान में भी केवलज्ञान प्रदान करने की शक्ति है ।
- समकित के 67 बोल की सज्झाय में भी कहा है, कि धर्म दायक, समकित दायक सद्गुरु के उपकार का बदला करोड़ों भव की सेवा शुश्रुषा से भी नहीं चुकाया जा सकता है ।
- शाक बिगड जाए, तो एक बार की रसोई बिगड़ती है, व्यापार की सीजन बिगड़ जाए तो वर्ष बिगड़ता है, पति पत्नी की पसंदगी में भूल हो जाय तो एक जीवन बिगड़ता है, जबकि देव और गुरु की पसंदगी में भूल हो जाय तो भवोभव बिगड़ जाते है ।

- प्रार्थना सूत्र में सद्गुरु की प्राप्ति और उनके वचनों की सेवा मांगी है ।
- देव-वीतराग होने चाहिए । सद्गुरु-कंचन और कामिनी के त्यागी एवं सच्चे अर्थ में जिनमत बतानेवाले होने चाहिए ।
- जिस क्षणिक सुख को दुनिया सुख मानती है, उसे परमात्मा का शासन भ्रम मानता है । जैसे रेगिस्तान में चलती गर्म हवा दूर से पानी जैसी लगती है ।
- जो निष्पाप जीवन जीते है और अन्य को ऐसा जीवन जीने की प्रेरणा देते है । जो भौतिक सुखों के प्रति निःस्पृह है । ऐसे गुरु स्वयं संसार सागर से पार उतरते है और आश्रितों को भी संसार सागर से पार उतारते है ।

- सद्गुरू लकड़ी की नाव के समान होते है, जो स्वयं संसार सागर से पार उतरते है और अन्य को भी पार उतारते है । जबकि कुगुरु पत्थर की नाव के समान होते है, जो स्वयं डूबते है और अन्य को भी डूबाते है ।
- कुगुरु की प्रवृत्ति लोक रंजन के लिए होती है, जबकि सुगुरु की प्रवृत्ति आत्म रंजन, प्रभु रंजन के लिए होती है ।
- गुरु की सबसे बड़ी भक्ति है, गुरु की आज्ञा का पालन करना ।
- आज्ञा पालन के बिना धर्म आराधना से, कोई विशेष फल प्राप्त नहीं होता है । वह तो हस्ताक्षर के बिना का चेक है ।
- कृतज्ञता गुण के अभाव में ही आज संसार में अनेक अनर्थों का सृजन हुआ है ।

- माता-पिता, स्वामी और गुरु भगवन्त का उपकार दुष्प्रतिकार है । इनमें भी गुरु का उपकार विशेष रुप से दुष्प्रतिकार है ।
- तीर्थंकर भगवान तो वंदनीय, नमनीय और पूजनीय है ही, उनके वचन रूप जिनागम भी वंदनीय, नमनीय और पूजनीय है ।
- परमात्मा के धर्म का बोध, श्रवण से होता है, आत्मा का भला जिनवचनों के श्रवण से होता है ।
- एकेन्द्रिय से चउरिन्द्रिय तक के सभी जीव एवं सभी असंज्ञी जीव मिथ्यात्वी है और हमेशा मिथ्यात्वी ही रहते है, क्योंकि उनके पास श्रवण के लिए श्रोतेन्द्रिय नहीं है और असंज्ञी जीव को समझने के लिए मन नहीं है ।

- धर्मी आत्मा को चमत्कार करना नहीं पड़ता है, स्वत: चमत्कार हो जाता है ।
- सच्चा सुख भौतिक पदार्थ में नहीं परन्तु आत्मा में है, जिसे जिन वचनों से ही जाना जा सकता है ।
- जब तक जिनवचनों का श्रवण नहीं होगा, तब तक जिनेश्वर भगवान का मार्ग कैसे समझ में आएगा ? और समझ के बिना समकित कैसे होगा ।
- उस मनुष्य का जीवन निष्फल है, जिसने जिन वचनों का श्रवण नहीं किया ।

- अजैन ग्रंथ में कहा है, जिसने अपने कानों के माध्यम से हरि भजन नही सुने है, उसके कान, कान नहीं परन्तु सांप के बिल समान है ।
- प्राप्त हुई शक्तियों का दुरुपयोग करे तो वह शक्ति भी निष्फल है ।
- जिसने जिनवचनों का पान किया, वह कैसी भी परिस्थिति में आनंद में रह सकता है ।
- परिस्थिति बदलना हमारे हाथ में नहीं है, परन्तु अपनी मन: स्थिति बदलना अपने ही हाथों में है ।
- अज्ञानी जीवों को पुण्य के उदय से प्राप्त हुआ सुख भी लाभ के बदले नुकसान करने वाला होता है ।

- दु:ख में दीनता के कारण समाधि दुष्कर है, सुख में लीनता के कारण समाधि अत्यंत दुष्कर है ।
- जिसने जिनवचनों का अमृतपान किया है, वे सुख में भी पाप क्षय करते है और दु:ख में भी कर्म निर्जरा करते है । देवलोक में भी निर्लेप रहते है और सातवीं नरक में भी पूर्वोपार्जित पापों का क्षय करते हैं ।
- T.V. की महाभारत-रामायण कभी की बंद हो गई, परन्तु घर-घर में कलह-क्लेश की महाभारत-रामायण शुरु है ।
- T.V. पर प्रवचन सुनने से विनय नहीं होने के कारण आत्मा के लिए घातक है । साथ ही सद्गुरु और साधर्मिकों का संग भी टूट जाता है ।

- T.V. पर अच्छी चीजों के साथ बुरी चीजें भी देखी जाती हैं । T.V. के कारण ही तरुणों के जीवन में अपराध बढे हैं ।
- जिसने अपने जीवन में नमन करने योग्य श्रेष्ठ व्यक्तिओं को अर्थात् पंच परमेष्ठी को नमन नहीं किया उसे अगला जन्म ऐसा मिलता है, जहाँ हमेशा सिर झुकाकर ही रहना पड़ेगा ।
- हर किसी को नमन करना योग्य नहीं है, जो नमन के पात्र है, गुणवान है, उन्हें ही वंदन करना है ।
- विनय करने से ज्ञान की प्राप्ति होती है और ज्ञान से हमारे मन में विवेक प्रकट होता है ।
- चारों गतिओं की अपेक्षा मनुष्य गति में सर्वाधिक मान कषाय है ।

- क्रोध, माया और लोभ को भी जीतना आसान है, परन्तु मान को जीतना अति कठिन है ।
- साधु जीवन में सबसे कठिन है गुरु समर्पण भाव । गुरु समर्पण भाव से सिद्धि तो प्राप्त होती ही है, साथ में वह केवलज्ञान की प्राप्ति भी करा सकता है ।
- जैन शासन की सबसे बड़ी विशेषता है कि शासन के स्थापक परमात्मा यथार्थवादी है । वे पूर्ण सत्य के प्ररूपक है ।
- अन्य धर्म में आंशिक सत्य है, जबकि जैन धर्म में पूर्ण सत्य है ।
- जिसे संसार के सुख कड़वे लगते हो और हृदय में वैराग्य की ज्योत प्रकट हुई हो उसे ही मुक्तिरुपी वरमाला पसंद करती है ।

- जो दूसरों को अभयदान देता है । उन्हें दीर्घ आयुष्य, निरोगी शरीर व सुंदर रूप प्राप्त होता है ।
- कल्पवृक्ष मात्र युगलिक क्षेत्र में है, परन्तु अहिंसा धर्म तो साक्षात् कल्पवृक्ष समान है ।
- मांसाहार और शराब का त्याग भी जीव रक्षा के उद्देश्य से है ।
- साधु जीवन में पांच महाव्रतों में प्रथम सर्वथा प्राणातिपात विरमण महाव्रत सबसे महत्वपूर्ण है । उसी व्रत के पोषण के लिए अन्य चार महाव्रत और रात्रि भोजन विरमण व्रत है ।
- जो जीव, जितने विकास क्रम में आगे है, उनकी हिंसा में ही ज्यादा पाप का बंध है ।
- जो ज्ञान आत्मा को लाभदायी नहीं, वह ज्ञान मिथ्याज्ञान है ।

- हिंसा न करे, तो भी हिंसा के क्रूर परिणाम आत्मा को दुर्गति में ले जाते है ।
- परमात्मा से दु:ख दूर होने की प्रार्थना नहीं करनी है, परन्तु दोषों से मुक्त होने की प्रार्थना करनी है ।
- सुख में जीवन की इच्छा और दु:ख में मरण की इच्छा आर्तध्यान है । अत: भगवान से दु:ख मुक्ति नहीं दु:ख में समाधि मांगनी चाहिए ।
- मजबूरी से तो हर कोई दु:ख को सहन करता है, परन्तु इच्छापूर्वक और समता भाव से दु:ख को सहन करने वाले विरले होते हैं ।
- आराधना मार्ग में हम जितने भी आगे बढ़े उसमें देव गुरु का उपकार है ।

- आनंदघनजी ने परमात्मा के साथ प्रीति करने की मांग की है, क्योंकि उनके साथ जुडी प्रीति आत्मा को शाश्वत मोक्ष पद देकर अनंत काल के लिए साथ देती है ।
- परमात्मा की पूजा का फल है चित्त की प्रसन्नता ।
- अरिहंत भी अपने साधना काल में सिद्ध का ही ध्यान करते है । एक अवसर्पिणी काल में तीर्थंकर मात्र 24, लेकिन सिद्ध तो असंख्य हुए है । सिद्ध भगवन्त अरूपी होने से उनका ध्यान करना कठिन है । अत: अरिहंतों का ध्यान, सर्वश्रेष्ठ आलंबन है ।
- जगत् में जो कुछ भी सुकृत है, उनको बताने वाले अरिहंत परमात्मा ही है ।

- चाहे जितना दुनिया का ज्ञान हो, परन्तु वह सम्यग् ज्ञान न हो तो वह गधे की पीठ पर लदे चंदन के भार के समान है ।
- रात्रि भोजन करने से वातावरण में पैदा हुए सारे जीव, भोजन में आते है जिससे जीव हिंसा भी होती है और बीमारियाँ भी बढ़ती है ।
- अंग्रेजो ने प्रतिमा और प्रत का नाश नहीं किया, परन्तु अपनी कूट नीति के माध्यम से शिक्षण संस्थाओं को खोलकर संस्कृति एवं श्रद्धा पर घात किया है ।
- सभी लोग पुण्य का फल चाहते है, परन्तु पुण्य कार्य करना नहीं चाहते है । पाप का फल नहीं चाहते है, फिर भी पाप मजे से करते है ।

- आज जीवन में रोग खूब बढ़े है, जिसका मुख्य कारण अभक्ष्य का भक्षण है ।
- तप से संवर और निर्जरा दोनों होते है । नए पापों को रोकने से संवर और पूराने पापों के क्षय से निर्जरा ।
- पहले सारा ज्ञान, मुख-जबान रखा जाता था । लगभग भगवान महावीर के निर्वाण के 1000 वर्ष तक सारा ज्ञान मौखिक आदान-प्रदान किया जाता था ।
- देवर्धिगणी क्षमाश्रमण ने वल्लभीपुर में 500 आचार्यो का सम्मेलन कराकर 1 करोड ग्रंथों को लिपि बद्ध किया था ।
- प्रतिमा और प्रत जैन शासन का आधार है, परन्तु मुसलमानों ने इन दोनों आधारों का खूब नाश किया ।

- विज्ञान ने अनेक भोग विलास के साधन देकर हमारे कीमती समय को नष्ट करने का काम किया है ।
- हम आगम के पांचों अंगों को मानते है । मूल सूत्र, निर्युक्ति, चूर्णी, भाष्य और टीका ये पांच अंग-आगमों के है ।
- भारत देश पूर्व दिशा का देश है । हमारे दिन का प्रारम्भ सूर्योदय से होता है । जबकि अंग्रेजों के दिन की शुरुआत गाढ़ अंधकार वाली रात्रि में होता है ।
- आज जैनों को ही जैनों की प्राकृत-संस्कृत भाषा का आकर्षण नहीं है । हमारे प्रतिक्रमण के सारे सूत्र प्राकृत और संस्कृत भाषा में है, परन्तु प्राकृत-संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं होने से इन सूत्रों का विशेष महत्त्व नहीं रहा है ।

- 12 वां अंग दृष्टिवाद लुप्त हो गया । फिर 11 अंगों पर शीलांकाचार्यजी द्वारा बनायी टीकाओं में से 9 अंगों की टीकाएं लुप्त हो गयी, जिसका पुनः निर्माण श्री अभयदेवसूरिजी ने किया ।
- अनंत और असंख्य के बीच में आकाश-पाताल जितना अंतर है ।
- पू. आर्यरक्षितसूरिजी ने आगमों को चार अनुपयोग में विभाजित किया ।
- भगवान ने बताया है, जीवों के प्रति मैत्री का भाव और जड़ के प्रति विरक्ति का भाव लाना है । परन्तु आज हमें जीवों के प्रति वैर भाव और जड़ के प्रति आसक्ति का भाव है ।

- भरत चक्रवर्ती छह खंड के अधिपति होने से 32,000 देशों के राजा थे, फिर भी वे मन से अलिप्त थे । 64000 स्त्रियों के भोगों में भी वे अलिप्त थे ।
- भोग के स्थान रूप-आरिसा भवन में अपने शरीर की अशुचि का विचार करते-करते भरत महाराजा ने केवलज्ञान प्राप्त किया था ।
- आत्मा के दो प्राण है-द्रव्य और भाव ।
- एक छोटा-सा निमित्त भी जीवात्मा के उत्थान और अधः पतन का कारण बन सकता है ।
- नवतत्त्व में जीव तत्त्व के 14 भेद बताए है तो जीव विचार में 563 भेद बताए है ।

- इरियावहियाए सूत्र के माध्यम से मात्र पांच पदों से सभी जीवों की क्षमा मांगी गई ।
- चेतना की अपेक्षा से सभी जीव एक समान हैं । त्रस स्थावर की अपेक्षा से जीवों के दो भेद है । वेद की अपेक्षा से तीन भेद । गति की अपेक्षा से चार भेद है । इन्द्रियों की अपेक्षा पांच भेद व काय की अपेक्षा से छह भेद है ।
- एकेन्द्रिय जीवों को सूक्ष्म और बादर भेदों में बांटकर और पंचेन्द्रिय जीवों को संज्ञी-असंज्ञी के भेद में बांटने से तथा विकलेन्द्रिय के तीन भेद करने से 7 भेद भी होते हैं और इनके सभी के पर्याप्ता और अपर्याप्ता रूप 14 भेद होते हैं ।
- आत्मा प्रतिसमय लोमाहार रुप आहार ग्रहण करती है । आहार मात्र विग्रह गति में नहीं होता है ।

- विग्रह गति में हमारी आत्मा ने अनंती बार अणाहारी पद प्राप्त किया परन्तु वह तो कुछ समय का ही था । परमात्मा की नैवेद्य पूजा से हमें शाश्वत अणाहारी पद की प्रार्थना करनी है ।
- मात्र जमीन में पैदा हो वह अनंतकाय नहीं, परन्तु जिसमें अनन्त जीव है, वह अनंत काय है ।
- आहार-शरीर-इन्द्रिय-श्वासोश्वास पर्याप्ति ये चार पर्याप्ति सभी एकेन्द्रिय जीव पूर्ण करते है । बेइन्द्रिय जीव से असंज्ञी पंचेन्द्रिय तक के सभी जीवो को पांचवी भाषा पर्याप्ति भी होती है और संज्ञी पंचेन्द्रिय को मन सहित छह पर्याप्ति होती है ।
- सभी जीव 3-पर्याप्ति तो पूरी करते ही है, एवं अपने योग्य पर्याप्ति जो जीव पूरी न कर सके वे अपर्याप्त है ।

- हमारा भविष्य हमारे वर्तमान के आधार पर है और वर्तमान को सुधारने के लिए करुणानिधान परमात्मा ने हमें आजीवन अनंतकाय के त्याग की आज्ञा की है ।
- लाखों उपदेश से भी एक आचार पालन की कीमत ज्यादा है । आचार पालन सहित दिया उपदेश अन्य को भी लाभ करता है ।
- श्रावक के घर में कम से कम पांच तिथि हरी वनस्पति का त्याग अवश्य होना चाहिए ।
- जिसके एक शरीर में एक जीव है, वह प्रत्येक वनस्पतिकाय है और जिसके एक शरीर में अनंत जीव है, वह साधारण वनस्पतिकाय (अनंतकाय) है ।

- जैन शासन में संख्या की कीमत नहीं है । आचार पालन के साथ परमात्मा के वचनों पर पूर्ण श्रद्धा की विशेष कीमत है ।
- विज्ञान ने पानी को H^2O के रूप में सिद्ध करने के लिए अनेक संशोधन किये, जबकि आचारांग सूत्र में वायुकाय को अप्काय की योनि के रूप में ही कहा है ।
- आयुष्य के दो प्रकार-सोपक्रम और निरूपक्रम ।
- भाव प्राण तो सिद्ध भगवन्तों को भी होते है, जबकि द्रव्य प्राण सभी संसारी जीवों को होते है ।
- पांच इन्द्रिय, तीन बल, श्वासोश्वास और आयुष्य रुप 10 प्राण संसारी जीवों के होते है ।

- प्रमाद के योग से जीवों के इन प्राणों का नाश होना ही वास्तविक हिंसा है ।
- क्रिया से भी मन के भाव महत्त्वपूर्ण है । मन में जीव रक्षा के भाव होने पर जीवों की हिंसा विराधना हो जाय, तो वहाँ हिंसा का पाप नहीं है और बचाने के भाव बिना की हुई प्रवृत्ति में हिंसा न हो, तो भी हिंसा का दोष है ।
- 10 प्राणों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण श्वासोश्वास और आयुष्य है । आयुष्य और श्वासोश्वास दोनों साथ ही पूरे होते है, अतः इनके पूरे होने पर जीवन का अंत हो जाता है ।
- पाप के बंध में मन ही महत्त्वपूर्ण है । मन सहित तंदुलिया मत्स्य 7वीं नरक में जा सकता है और मन रहित असंज्ञी जीव पहली नरक तक ही जा सकता है ।

- मन से पाप बांधकर प्रसन्नचन्द्र राजर्षि ने सातवीं नरक के योग्य कर्म बांध लिया और मन के भाव बदलने पर उन पापों का क्षय कर मोक्ष प्राप्त कर लिया ।
- जीवात्मा को मन मिलना बहुत कठिन है और मन की प्राप्ति होने के बाद उसको शुभ योग में जोड़ना उससे भी ज्यादा कठिन है ।
- पृथ्वीकाय आदि एकेन्द्रिय से लेकर असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों में मन नहीं है । मात्र संज्ञी पंचेन्द्रिय के पास ही मन है ।
- काया को धर्म में जोड़ना आसान है, परन्तु मन को धर्म में जोड़ना सबसे कठिन है ।

- मन से किया हुआ धर्म अणु जितना हो तो भी मेरु पर्वत जितना हो जाता है । और यदि उसके बाद पश्चात्ताप का भाव हो, तो वह मेरू जितना भी सत्कार्य अणु जितना हो जाता है ।
- कई लोग धन के मालिक होते हैं तो कई मात्र धन के चौकीदार होते है ।
- शुभ भावों से आत्मा तीर्थंकर नाम कर्म का भी बंध कर सकती है ।
- तीर्थंकर नामकर्म के बंध में तपश्चर्या करनी पडे ऐसा एकांत नियम नहीं हैं । श्रेणिक महाराजा ने कोई विशेष तप नहीं किया था फिर भी तीर्थंकर नामकर्म का बंध किया ।

- हिटलर ने 60 लाख यहूदियों को Gas Chamber में बंद करके मरवा दिया ।
- आयुष्य बाकी हो तो ही Doctor बचा सकते है । आयुष्य के पूर्ण होने के बाद एक क्षण भी जीवित रहना किसी के हाथ में नहीं है ।
- जीवदया, अनुकंपा एवं जीवों को अभयदान देने से दीर्घ आयुष्य की प्राप्ति होती है ।
- जगह देने में सहायक आकाशास्तिकाय द्रव्य है ।
- निर्दोष जीवों को बिना कारण मार देने से अगले जन्म में अल्प आयुष्य मिलता है ।
- जीव और जड़ को स्थिरता करने में सहायक है–अधर्मास्तिकाय ।

- जीव तत्त्व को पूर्ण रूप से जानने के लिए अजीव द्रव्य को भी अच्छी तरह जानना जरूरी है ।
- धर्मास्तिकाय के बिना जीव या जड़ गति नहीं कर सकता है । ये अरूपी होने से विज्ञान की पहुंच से बाहर है ।
- धर्मास्तिकाय के प्रभाव से सिद्ध आत्मा सिर्फ लोक के अन्त तक जा सकती है, अलोक में नहीं जाती ।
- शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श वाले पदार्थ पुद्गल स्वरूप है ।
- सभी जीवों को मात्र पुद्गल से ही प्रेम है, जो जड़ स्वरूप है । जड़ के प्रेम में जीव के साथ मैत्री का भाव नहीं हो सकता है ।
- पूर्वधर महर्षि या गणधर भगवन्तों द्वारा रचित सूत्र को असज्झाय काल में पढ़ने से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध होता है ।

- आत्मा निर्मल है, फिर भी कर्मरूप पदार्थ के आत्मा में प्रवेश से आत्मा को चार गति में मार खानी पड़ती है ।
- सुख-दु:ख का अनुभव आत्मा को ही होता है, मात्र शरीर को इनका अनुभव नहीं होता है ।
- शुद्ध परमात्मा के प्रति भक्ति और पूज्य भाव रखना चाहिए ।
- पुण्य पूरा होने पर कृष्ण महाराजा प्यासे ही मर गए ।
- मरने के बाद शरीर को जला दिया जाता है, फिर भी यह शरीर अग्नि का प्रतिकार नहीं करता, क्योंकि जो अनुभव करता है, ऐसी आत्मा का अस्तित्व नहीं है ।
- जीवन में धर्म का प्रारम्भ दान से होता है ।

- परमात्मा के साथ संग करने से हमारी आत्मा भी परमात्म के समान अजर-अमर और अविनाशी बनती है ।
- जैसे चोर लूटेरा व्यक्ति घर में प्रवेश करता है, तो वह विनाश करता है, वैसे ही आत्मा में पर पदार्थ रूप कर्म पुद्गल के प्रवेश से आत्मिक गुणों का विनाश होता है ।
- जैसा संग होता है, वैसा रंग हम पर चढ़ता है । दुर्जन का संग करने से जीवन में दुर्जनता का प्रवेश होता है तो सज्जनों का संग करने से जीवन में सज्जनता आती है ।
- जिन्हें संसार के पुद्गलों में ही सुख का अनुभव होता है, उन्हें पुद्गला भिनंदी कहते हैं । ये आत्माएं भव संसार में खूब भटकती हैं ।

- धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय चौदह राजलोक में एक ही द्रव्य है इसलिए इनमें परमाणु का भेद नहीं है । परमाणु का भेद मात्र पुद्गल में ही है । प्रदेश और परमाणु में मात्र इतना ही भेद है कि प्रदेश कभी स्कंध से अलग नहीं होता और परमाणु अलग होता है ।
- धर्म-अधर्म और आकाश को आंखों से देखा नहीं जा सकता, क्योंकि अरूपी है । अरूपी होने पर भी इसकी सिद्धि है कि ये हमें चलने, स्थिर रहने और अवगाहना देने का कार्य करते है । e.g. वायु अरूपी है, परन्तु उसका अनुभव स्पर्श से कर सकते है ।
- चय और अपचय पुद्गल का स्वभाव है । शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श पुद्गल का ही लक्षण है ।

- जैसे शब्द पुद्गल है, वैसे रूप भी पुद्गल है, जिसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजा जा सकता है । जिसे Mobile आदि के साधन से पकड़ा जा सकता है ।
- दुनिया में जो भी वस्तु दिखती है, वह सब पुद्गल है । पुद्गल समय-समय पर बदलते रहते है ।
- जिस वस्तु को हम बडे स्वाद से खाते है, उसके भूत और भविष्य के पर्याय को देखना भी पसंद नहीं करते है ।
- सभी जीवों के प्रति मैत्री भाव, गुणवानों के प्रति प्रमोद भाव, दु:खी के प्रति करुणा भाव एवं पापी के प्रति माध्यस्थ भाव रखना चाहिए ।
- जीव के प्रति मैत्री, जगत् के प्रति विरक्ति और जगत्पति के प्रति भक्ति का भाव होना चाहिए ।

- विचार ही हमारे सुख-दु:ख का आधार है ।
- संसार में जो भी अनुकूलताएं प्राप्त होती है, वह पुण्य का उदय है और प्रतिकूलताएं प्राप्त होती है, वह पाप का उदय है ।
- पुण्य त्याग करने योग्य भी है और उपार्जन करने योग्य भी है ।
- श्रावक और साधु के व्रतों का मूल समकित है ।
- सोने की बेडी से बंधा व्यक्ति भी कैदी है, वैसे ही पुण्य का बंध सोने की बेडी जैसा है, जो आत्मा को संसार में बांधकर रखता है ।
- मोक्ष में जाने के लिए पुण्य भी बाधक है, इसलिए साधु जीवन में प्राय: करके पुण्य बंध की प्रवृत्ति का त्याग है ।

- सद्गृहस्थ के लिए पुण्य बंध की प्रधानता होने से उसे दान देकर ही भोजन करना चाहिए ।
- पुण्य का उदय 42 प्रकार से एवं पुण्य का बंध 9 प्रकार से होता है ।
- हाथ में लिए भोजन का कवल, पुण्य के उदय बिना मुंह में नहीं जा सकता ।
- साधना करे, सहन करे और सहायता करे वह साधु ।
- पुण्य का उदय हो तो व्यक्ति मौत के मुंह में जाकर भी बच जाता है, और पाप के उदय में सारी अनुकूलताओं में भी मौत आ जाती है ।

- इस भव में मोक्ष नहीं हो सकता है, फिर भी संयम जीवन के द्वारा मोक्ष के नजदीक पहुंच सकते हैं ।
- धर्मरत्न प्रकरण में वीतराग के धर्म की प्राप्ति के लिए 21 गुण बताए है, उनमें से 19 गुण पुरुषार्थ से पाए जा सकते है । परन्तु 2 गुणों के लिए पुरुषार्थ की अपेक्षा पुण्य के उदय की जरूरत है । 1) रूपवान = पांच इन्द्रियाँ परिपूर्ण । 2) अनुकूल परिवार ।
- जिसके पास पांच इन्द्रियों की परिपूर्णता नहीं है, उसे दीक्षा नहीं दे सकते है ।
- नौ प्रकार के पुण्य बंध के हेतु में सबसे पहला अन्न पुण्य है । दूसरा जल पुण्य । आहार और पानी जीवन के अंग है । स्वयं के उपभोग में पुण्य नहीं है, परन्तु अन्य को दान देने में पुण्य का बंध है ।

- जहाँ स्वार्थ है, वहाँ देने से पुण्य का बंध नहीं है । नि:स्वार्थ भाव से की गई भक्ति ही पुण्य का बंध कराती है ।
- जिस दिन हमने सुपात्र दान दिया, उस दिन का भोजन अमृत भोजन मानना चाहिए ।
- भगवान नवतत्त्वों के प्रकाशक होने से परमात्मा के नौ अंगों की पूजा है । जो व्यक्ति परमात्मा की नवांगी पूजा करते हैं उन्हें अवश्य ही नवतत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए ।
- पाप कर्म बंध के समय सावधान रहना चाहिए, क्योंकि पाप कर्मों का विपाक खूब दारुण है ।
- पापानुबंधी पुण्य के उदय वाली वेश्या आदि के लिए पुण्य का उदय भी खतरनाक है ।

- सद्गृहस्थ को धर्म मार्ग में आगे बढ़ने के लिए पुण्यबंध के कार्य अवश्य करने चाहिए, क्योंकि पुण्य के द्वारा ही पुनः धर्म सामग्री प्राप्त होती है ।
- निष्काम भाव से धर्म आराधना करने से पुण्यानुबंधी पुण्य का बंध होता है ।
- चार प्रकार के घाति कर्मों की सारी प्रकृतियाँ पाप के उदय रुप है ।
- सत्कार्य करने के बाद हम कुछ मांग लेते है, तो जितना मांगा हो उतना ही मिलेगा, लेकिन कुछ भी नहीं मांगा तो कल्पनातीत प्राप्त होगा ।

- पाप के उदय में खुश होना है और पाप के बंध में सावधान रहना है । परंतु अधिकांश लोग पाप के बंध में खुश होते है, परंतु पाप के उदय में रोते है ।
- सुख में लीन और दुःख में दीन बनना असमाधि है । आर्त्तध्यान का कारण है ।
- आठ कर्मों में मोहनीय कर्म सबसे ज्यादा खतरनाक है । इसके दो कार्य है 1) जिनवचनों पर श्रद्धा नहीं होने देना और 2) श्रद्धा के अनुसार आचरण नहीं होने देना ।
- समवसरण में प्रभु की देशना सुनते हुए भी मोहनीय के गाढ़ उदय वाली आत्माओं को परमात्मा के वचनों पर श्रद्धा नहीं होती है ।

- चारित्र मोहनीय के 25 भेदों में 4 कषायों के 4 भेद रुप 16 कषाय एवं हास्यादि 9 नो कषाय । कष = संसार, आय = वृद्धि करना ।
- जगत् में अरिहंत परमात्मा न होते तो प्रायः किसी भी जीव को सम्यग् दर्शन आदि धर्म की प्राप्ति नहीं होती । अतः पंच परमेष्ठी में अरिहंत परमात्मा मार्ग-दर्शक है ।
- किये हुए कर्मों को दो आत्माएं अवश्य जानती है ।
  1. स्व आत्मा 2. परमात्मा ।
- जो आत्मा को पतित करे वह पाप और जो आत्मा को पावन करे वह पुण्य ।

- संपूर्ण जगत् पर परमात्मा की आज्ञा का शासन चलता है । जिसने आज्ञा की आराधना की है, उसे कर्म सत्ता ने ऊँचा स्थान दिया है और जिसने आज्ञा की विराधना की, उसे कर्मसत्ता संसार में डूबाती है ।
- अरिहंतादि नवपद की आराधना से आत्मा संसार से मुक्त होती है, तो 5 विषय और 4 कषाय रुप नौ पदो से आत्मा का संसार बढता है ।
- साधु पद का काला वर्ण साधु के वैराग्य का निर्देश करता है । साधु संसार में रहे परंतु संसार का रंग उस पर नहीं चढता है ।
- मिथ्यात्व होने पर त्याग-तप से भी आत्मा, पापों को बांधती है ।

- पांच इन्द्रियों के विषयों को जीतने के लिए पंच परमेष्ठी की आराधना बताई है–

  श्रोतेन्द्रिय को वश करने के लिए अरिहंत की वाणी सुनों ।

  चक्षु इन्द्रिय को वश करने के लिए अरुपी सिद्ध भगवंतों के रुप को देखों ।

  घ्राणेन्द्रिय को वश करने के लिए सदाचारी आचार्य की सुगंध लो ।

  रसनेन्द्रिय को वश करने के लिए ज्ञानामृत को पीनेवाले उपाध्याय की उपासना करो ।

  स्पर्शनेन्द्रिय को वश करने के लिए सुसाधुओं की वैयावच्च करो ।

- दुनिया दु:ख को भयंकर कहती है, जैन शासन, पाप का कारण होने से सुख को भयंकर कहता है ।
- पुण्य पूरा होने पर छ खंड का राजा-सुभुम-चक्रवर्ती, 7 वां खंड न जीत सका परंतु लवण समुद्र में डूबकर सातवीं नरक में चला गया ।
- सत्पुरुष कभी भी घर में आये महेमान, शरणागत, रोगी, वृद्ध, याचक को कभी भी नहीं मारते है ।
- सम्यग्दर्शन नवपदों का मूल है । वृक्ष का आधार जड है, तो धर्म का आधार सम्यग्दर्शन है ।
- हस्ताक्षर के बिना लाख रुपये के चेक की कोई कीमत नहीं वैसे ही समकित बिना धर्म की कोई कीमत नहीं है ।

- समकित के बिना नौ पूर्व तक का ज्ञान भी अज्ञान है और समकित के संग में आठ प्रवचन माता का ज्ञान धारक साधु भी ज्ञानी है ।
- आज तक समकित के बिना हमारी आत्मा ने मेरु पर्वत जितने ओघे लिये है, चरवले की तो गिनती ही नहीं है ।
- भगवान के वचनों पर जिसे श्रद्धा नहीं उसे साधर्मिक, श्रावक या साधु भी नहीं कह सकते है ।
- हमें हर व्यक्ति पर विश्वास है, परंतु वीतराग के वचनों पर विश्वास नहीं है ।
- उपधान हो या दीक्षा, पहले समकित की प्रतिज्ञा कराई जाती है ।

- समकित के अभाव में उत्कृष्ट चारित्र भी मात्र, काय-क्लेश ही है ।
- जैसे पानी का बिलोना करे अथवा मुंगफली के छिलके को पीले तो हाथ में कुछ नहीं आता है, वैसे ही समकित के बिना पंच परमेष्ठी में भी प्रवेश नहीं ।

  साधु के पद में प्रवेश के बिना पंच परमेष्ठी में प्रवेश नहीं और साधु बनने के लिए समकित जरुरी है ।
- भगवान के अभाव में भगवान के वचन ही हमारे लिए भगवान स्वरुप है ।
- परमात्मा की सबसे बड़ी विशेषता वे यर्थाथवादी अर्थात् जो वस्तु का जो स्वरुप है वैसा ही बताने वाले है ।

- जैन शासन में द्रव्य आरोग्य से भी भाव आरोग्य ज्यादा महत्त्वपूर्ण है । अत: Doctor के वचनों से भी भगवान के वचनों पर हमें विशेष विश्वास होना चाहिए ।
- 18 पापस्थानकों में सबसे मजबूत मिथ्यात्व है, उसे नाश करने के लिए समकित है । मिथ्यात्व का बल ही शेष 17 पापों को मजबूत करता है ।
- परमात्मा मोक्ष में गए है, अत: उन्होंने अपुनरावृत्ति दशा प्राप्त की है । जिस स्थान को प्राप्त किया है, वहां से कभी नीचे नहीं आना है ।
- जीवन की दृष्टि से सब जीव एक समान है, फिर भी विकास की दृष्टि से एकेन्द्रिय जीव हीन है और पंचेन्द्रिय जीव उच्च कक्षा को पाये हुए है ।

- एकेन्द्रिय से द्वीन्द्रिय अवस्था को पाने में जीव को खुब अकाम निर्जरा करनी पडती है ।
- आचारांग सूत्र में परमात्मा ने कहा है, किसी जीव को मारते समय तू उसके द्रव्यप्राणो का नाश कर रहा है, तो साथ ही अपने भाव प्राणों को नाश कर रहा है ।
- श्रेणिक महाराजा ने एक गर्भवती हरिणी की हत्या की तब उसे तो थोडी देर ही दर्द सहन करना पडा, परंतु श्रेणिक राजा को पहली नरक में 84 हजार वर्ष तक वैसी ही वेदना सहन करनी पड रही है ।
- बुरा व्यवहार करने वाले पर भी अच्छा व्यवहार करना यह धर्म नीति है ।

- अपकारी को अपकारी और उपकारी को उपकारी मानना, लोक नीति है, परंतु धर्म नीति है कि अपकारी को उपकारी मानकर उसपर भी उपकार करना ।
- चारित्र पद आत्मा पर लगे हुए कर्म परमाणुओं को खाली करता है ।
- यदि कर्म क्रमशः उदय में आवे और उदीरणा के द्वारा कर्मक्षय न किये जावे तो आत्मा का मोक्ष कभी नहीं हो सकता ।
- आत्मा पर लगे कर्मों को जलाकर नष्ट करना निर्जरा है, जो विशेष रुप से साधु जीवन में हो सकती है ।
- जैन शासन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है चारित्र धर ।
- क्रिया करते करते मात्र अन्तर्मुहूर्त के लिए भी यदि भावों की अभिवृद्धि हो जाय तो की हुई क्रियाएं सफल है ।

अपेक्षा न रखें :-

यदि आप स्वाधीन-शांति को चाहते हैं
तो दूसरों से किसी प्रकार की अपेक्षा न रखे ।
जो व्यक्ति आत्म निर्भर हैं, अपने कर्त्तव्यों के प्रति पूर्ण सजग है । दूसरे के मान-सम्मान की, मीठे-मधुर शब्दों की अपेक्षा नही रखता हैं, वही व्यक्ति मस्ती से जी सकता है । जीवन में जब अहंकार आता हैं, तब व्यक्ति के जीवन में अनेक अपेक्षाएँ जन्म ले लेती है । *'अपेक्षाएँ'* व्यक्ति को कमजोर बनाती है । अपने आत्मबल पर कुठाराघात करती है । सदैव निरपेक्ष जीवन जीऐ ।
गीता में ठीक ही कहा हैं-
'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु नकदाचन्'
'कर्म करने में ही तुम्हारा अधिकार है,
फल की अपेक्षा मत रखो ।'

❋ साहस :–

साधना के मार्ग में आगे बढने के लिए साहस अर्थात् दृढ मनोबल का होना अत्यंत ही आवश्यक है । जिसके पास दृढ मनोबल नहीं हैं, ऐसा व्यक्ति कार्य का आरम्भ तो कर देता हैं, किंतु ज्योंही छोटी-मोटी प्रतिकूलताएँ आती हैं, वह या तो कार्य छोड़कर भाग जाता है अथवा एकदम हताश या निराश हो जाता है । साहस में डरपोक व कायर व्यक्ति अपने जीवन में कभी महान् कार्य नहीं कर सकता । हाँ, इस *'साहस'* गुण का ठीक समय पर और ठीक जगह पर इस्तेमाल होना चाहिये, अन्यथा गलत कार्य में किया गया साहस स्व-पर उभय के लिए आपत्ति का कारण बन जाता है ।

❋ जीवन का उद्देश्य :–

रोटी, कपड़ा और मकान तो जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है, परंतु उसी से जीवन का लक्ष्य सिद्ध नहीं होता । मानव जीवन का उद्देश्य तो परम तत्त्व की उपासना है । परंतु कलिकाल के प्रभाव से आज का मानवी रोटी-कपडा और मकान के जाल में ही फंस गया है । उसे अन्न की रोटी, सादे वस्त्र और सामान्य झोपडी पसंद नहीं है । विलासी-भोजन, फैशनेबल वस्त्र और सैंकडों वर्ष टिके ऐसे विशाल महल को पाने, बनाने में ही व्यक्ति अपने जीवन की बहुमूल्य क्षणों को खो रहा हैं, क्योंकि वह लक्ष्य ही भूल गया है । इन तीनों की प्राप्ति में ही उसने अपने जीवन की इतिश्री मान ली है । यह कितनी मुर्खता है ?

❋ काम ओर लोभ :-

काम-विजेता / सदाचारी पुरुष ही अपनी स्त्री का *'पति'* कहलाने योग्य है, जबकि कामांध पुरुष तो स्त्री का गुलाम ही होता है । जो व्यक्ति अपनी सद्भावनानुसार धन का सदुपयोग कर सकता है, वही व्यक्ति धन का मालिक कहलाता है । धन का एक मात्र संग्रह करने वाला, तो धन का मालिक नहीं किंतु धन का गुलाम ही होता है । इन्द्रिय-संयम के द्वारा व्यक्ति काम पर विजय प्राप्त कर सकता है और संतोष-वृत्ति के द्वारा व्यक्ति लोभ पर विजय पा सकता है ।

काम व लोभ दोनों आत्मा के भयंकर शत्रु है, उन पर संपूर्ण विजय न पा सको तो कम से कम उनके गुलाम तो कभी नहीं बनना चाहिये ।

❋ धन की वासना भयंकर है :-

धन खराब नहीं है, धन की वासना खराब है । धन की वासना का गुलाम व्यक्ति धन का सदुपयोग नहीं कर सकता, वह तो अपने धन को भोग-विलासिता के पीछे ही खर्च करता है । जब कि जो धन की वासना से मुक्त हो गए ऐसे धनवान् व्यक्ति ही बडे बडे दानवीर-त्यागवीर बने है । शालिभद्र, अभयकुमार, कुमारपाल, वस्तुपाल, तेजपाल, भामाशाह, पेथडशाह, झांझणशा, जगडुशा आदि के पास धन की कोई कमी नहीं थी, फिर भी उनका नाम इतिहास के स्वर्णपृष्ठों पर अंकित हुआ । क्योंकि, वे धन की वासना से मुक्त थे ।

❋ समर्पण से अनुग्रह :–

परमात्मा के चरणों में ढ़ेर सारे उत्तम पदार्थों को धर देने मात्र से परमात्मा का अनुग्रह प्राप्त नहीं होता है- परमात्मा का अनुग्रह (कृपा) तो प्राप्त होता हैं- मन के समर्पण से । मन जब प्रभु के चरणों में पूर्ण समर्पित हो जाता हैं तो परमात्मा की कृपा अवश्य प्राप्त होती हैं और उसी भगवत् कृपा से अपनी आत्मा में छुपे दोष नष्ट हो जाते है । परमात्मा के प्रति अपने हृदय में जितना समर्पण का भाव होता है, उतने ही अंश में परमात्मा की कृपा हमें प्राप्त होती है । परमात्म-कृपा को पाने के लिए द्रव्य के बजाय भाव के समर्पण की मुख्यता है ।

❋ सन्मति का मूल्य :–

प्रभु के पास संतति नहीं सन्मति मांगो । संतति मिल गई परंतु वह दुर्जन निकल गई तो तुम्हारी उज्जवल कीर्ति को कलंकित कर देगी । संतति का अभाव कभी कभी दु:ख देता हैं परंतु एक कुपुत्र, पिता को जीवन पर्यंत रुलाता है । यदि सन्मति पास में होगी तो अल्प संपत्ति में, अल्प संतति में भी व्यक्ति आनंदमय जीवन जी सकेगा । अनुकूल संतति शायद एक जीवन में सुख देगी, जब कि सन्मति, व्यक्ति को सन्मार्ग प्रदान कर अनेक जन्मों को सुधार देगी । अत: परमात्मा के पास मांगने का मन हो जाय, तो सन्मति मांगना, संपत्ति नहीं ।

❋ मन की सुरक्षा :–

आज व्यक्ति, अपना साग न बिगड़ जाय, इसके लिए सावधान रहता है । आचार न बिगड़ जाय उसके लिए सावधान रहता है । घर न बिगड़ जाय उसके लिए सावधान रहता है । तन न बिगड़ जाय उसके लिए भी सावधान रहता हैं, परंतु मन की सुरक्षा के लिए, मन के रोगों से बचने के लिए थोड़ा भी पुरुषार्थ नहीं करता है । तन के रोग एक देह का नाश करेंगे जब कि मन के रोग अनेक जन्मों का नाश कर देंगे । सावधान रहें-मन के रोग से । मन की सुरक्षा के लिए अच्छे वातावरण के बीच रहना चाहिये । अशुभ-निमित्तों से सदैव दूर रहे ।

❋ कामांध न बनें :-

सर्वश्रेष्ठ तो यही हैं– *'अपना जीवन संपूर्ण वासना मुक्त बने'* परन्तु इतना अभी संभव न हो तो वासना-नियंत्रित तो अवश्य होना चाहिये । काम आदि वासनाओं के नियंत्रण हेतु गृहस्थ के लिए परस्त्री-गमन त्याग, वेश्यागमन त्याग और स्व-स्त्री संतोष की मर्यादा बतलाई गई है । संपूर्ण काम विजेता न बन सके तब तक काम-नियंत्रक तो अवश्य बनना चाहिये । किसी भी संयोग में कामांध तो कभी नहीं बनना चाहिये और काम की प्रवृत्ति में भी उसकी आसक्ति को तोडने का प्रयत्न करना चाहिये ।

❋ कल्याण-मार्ग :–

सुख में विरक्ति, दु:ख में सहनशीलता और पाप से
विरति आत्म कल्याण के मार्ग है ।
सुख में आसक्ति, दु:ख में दीनता और पाप में प्रवृत्ति
अकल्याण का मार्ग है । आत्म कल्याण
की चाह हो तो पहला मार्ग अपनाना चाहिये और दूसरे मार्ग से
तो दूर रहने का प्रयत्न करें ।
पहला मार्ग में आत्महित रहा हुआ है ।
अपना अहित कौन चाहता हैं ?
फिर भी आश्चर्य है कि व्यक्ति पहले मार्ग को छोड़कर
दूसरे मार्ग को अपनाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है ।
यह कैसी विचित्रता है ?

❋ प्रभु से संबंध :–

56 या 58 वर्ष के बाद तो सरकार भी व्यक्ति को नौकरी से
निवृत्त करती हैं और शेष जीवन तक उसे पेंशन देती है ।
इसका मतलब हैं कि 55 या 58 वर्ष की उम्र के बाद तो शेष
जीवन प्रभु-भक्ति में ही बिताना चाहिये ।
इसके बाद भी व्यक्ति दूसरी नौकरी की तलाश
करता हैं और सरकार की पेंशन भी लेता हैं,
इसका मतलब तो यह है कि उसे केवल धन (पैसे) में ही रस हैं,
परमात्मा के साथ वह संबंध जोड़ना नहीं चाहता है ।
जीवन के अंत समय तक नौकरी व पैसे से ही
संबंध रहा तो मृत्यु की अंतिम घडियों में
परमात्मा कैसे याद आएंगें ?

❋ आसक्ति छोड़े :-

पनिहारिन अपने सिर पर घडों को उठाती है
और परस्पर बातें करती चलती है ।
बातें करने पर भी उसका मन तो उस घड़े में होता है ।
बस, इसी प्रकार प्रभु-प्रेमी को घर में रहना चाहिये ।
घर के समस्त कार्यों को करने के बाद भी उस घर में
आसक्त बन कर मत रहो । काया से भले घर की क्रियाएँ करनी
पड़े परन्तु अपना मन तो उस प्रभु को सौंप दो ।
घर की प्रवृत्ति करने पर भी मन तो उस
परमात्मा के साथ ही जुड़ा होना चाहियें । जिसका मन प्रभु से,
प्रभु-आज्ञा से जुड़ा हो वह भोगी अवस्था में भी
योगी का जीवन जी सकता है ।

❋ राम की महानता :-

अजैन रामायण का प्रेरक प्रसंग हैं–
रावण से युद्ध केपूर्व ही बिभीषण राम की शरण में आ गया तब राम
ने रावण-वध के पूर्व ही बिभीषण का राज्याभिषेक
कर दिया । राम के इस विचित्र (?) व्यवहार को देख
सुग्रीव ने कहा, *'प्रभो ! यह आपने क्या किया ?'*
अब रावण यदि आपकी शरण में आ जाय तो
उसे फिर कौन सा राज्य दोगे ? राम ने कहा 'अरे !
इसमें क्या है ? रावण यदि शरण में आ जाय तो मैं
उसे अयोध्या का राज्य दे दूंगा । राम का वचन
मिथ्या नहीं होगा ।' सुग्रीव तो यह सुनते ही दिग्मूढ हो गया ।
राज्य पाने के लिए युद्ध हो रहे है और राम,
प्राप्त राज्य को छोड रहे है ? कैसी अनासक्ति ।

❋ सादा जीवन :–

ठीक ही कहा है–

It is simple to be rich but
It is difficult to be simple.

पैसा कमाना कठिन नहीं है, परन्तु सादा जीवन
जीना अत्यंत कठिन है । पैसे आने के बाद
सादगीपूर्ण जीवन जीना अत्यंत ही दुष्कर है ।
वास्तव में तो धन नहीं किंतु धन की वासना ही खतरनाक हैं ।
धन आते ही व्यक्ति भान भूल जाता हैं, इसलिए ज्ञानियों
ने अधिक धन के संग्रह से दूर रहने का ही उपदेश
दिया है । धन का संग्रह बुद्धि को भ्रष्ट किए बिना नहीं रहता हैं ।

❋ क्रोध विष है :–

ठीक ही कहा हैं–

Anger breeds poison in your blood

क्रोध अपने रक्त में विष उत्पन्न करता है ।
अति क्रोध से आंखे लाल हो जाती है, चेहरा विकराल हो जाता हैं,
मुख पर से सौम्यता नष्ट हो जाती है और शरीर
के रक्तकणों में विष फैलने लग जाता है ।
अपने क्रोध से दूसरो को नुकसान हो या न हो,
अपने आप को नुकसान तो हो ही जाता हैं ।
क्रोध तो अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी लगाने के समान है ।
अपने ही हाथों से अपने आपको नुकसान
पहुँचाने में कौनसी बुद्धिमत्ता हैं ? सदैव सावधान रहें,
क्रोध से ! सदैव दूर रहें, क्रोध से ।

❋ सफलता :–

बुद्धि का वास्तविक फल तत्व-चिंतन है ।
बुद्धि मिलने पर भी यदि उस बुद्धि का उपयोग तत्वचिंतन में
न करे तो वह बुद्धि निरर्थक ही है ।
देह की सार्थकता व्रत-पालन में है ।
धन की सार्थकता सुपात्र-दान में हैं और
वाणी की सार्थकता मधुर व हितकर वाणी में है ।
मधुर वचन टूटे हुए दो संबंधों को जोड देता हैं
जब कि कटुवचन तो तीर का ही काम करता है ।
सुई जोड़ने का काम करती है और
कैंची तोड़ने का काम करती है । अपनी वाणी
सुई की भांति होनी चाहिये-कैंची की भांति नहीं ।

❋ अपेक्षा-दु:ख का मूल :–

हर शुभ-कार्य को प्रारम्भ करने के पूर्व
तेरे अंतर - मन में *'लोग मुझे अच्छा कहेंगे'*-की जो अपेक्षा
रही हुई है यह *'अपेक्षा'* ही तेरे दु:ख का कारण है ।
संभव हैं - आज यह दुनिया तेरे जिस कार्य की प्रशंसा कर रही है,
कल उसी कार्य की निंदा भी कर सकती है ।
लोक-अभिप्राय: के अनुसार तूं यदि अपनी प्रवृत्ति बदलेगा
तो जीवन में कभी सफलता हासिल नहीं कर सकता ।
'दुनिया तो दो रंगीली है'-उसका कभी विश्वास मत करना ।
अभिप्राय की ही तेरे दिल में अपेक्षा है तो
ज्ञानी गुरु के अभिप्राय की अपेक्षा रखना । तेरी प्रवृत्ति के
संदर्भ में उनका क्या अभिप्राय हैं ? उसे ध्यान में रखकर
अपनी प्रवृत्ति चालू रखना ।

❋ शिक्षण का सच्चा उद्देश्य :–

आज समाज में अनेक समस्याएँ बढ़ी हैं
जहाँ देखो वहाँ हिंसा, हत्या, आत्महत्या, लूट, बलात्कार, अपहरण,
दुर्घटना आदि के समाचार देखने, पढ़ने व सुनने को मिलते हैं ।
इसका एक कारण यह भी है कि आज शिक्षण का उद्देश्य केवल
रोटी, कपड़ा और मकान हो गया है ।
सचमुच, रोटी, कपड़ा और मकान तो
जीवन जीने के साधन होने चाहिये, शिक्षण का उद्देश्य तो
सुसंस्कार युक्त जीवन होना चाहिये । शिक्षण प्राप्त करने के
बाद भी यदि जीवन में सुसंस्कारों का सिंचन न हो तो
उस डिग्री लक्षी या नौकरी लक्षी शिक्षण का कोई अर्थ नहीं है ।

❋ संघर्ष का मूल :–

आज मेचिंग का जमाना है । कपडों के रंगों का मेचिंग !
फर्नीचर के रंगो का मेचिंग !! दीवार के रंगों का मेचिंग !!!
सब जगह *'मेचिंग'* जरुरी है,
परंतु आश्चर्य हैं कि सर्वत्र रंगों में मेचिंग की बात करनेवाला
व्यक्ति अपने ही परिवार के साथ,
अपने ही मित्रों के साथ स्वभाव को
मेच करने के लिए तैयार नहीं होता है ।
इस कारण रंगों का मेचिंग हो जाने के बाद भी स्वभाव का
मेचिंग नही होने से सर्वत्र संघर्ष का वातावरण ही
देखने को मिलता है ।
संघर्ष मिटाना हैं तो, मेच होना सीखें ।

❋ अभिमान मत करो :–

अपने आपको महान् समझना यही सबसे बडी भूल है ।
बस, इस भ्रांति में से ही अहंकार को जन्म मिलता है ।
सत्ता, सम्पत्ति, सौंदर्य, विद्या, शक्ति व शौर्य जो कुछ मिला है उसका अभिमान न करें ।
कहावत हैं– *'सेर पर सवा सेर होता ही है ।'*
जो कुछ तुम्हें मिला, उससे भी अधिक अनेकों को मिला है ।
अत: अपनी शक्ति का अभिमान मत करो ।
'लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर ।'
जीवन में नम्र व्यक्ति ही प्रभुता को हासिल कर सकता हैं ।
अत: अभिमान से सदा दूर रहे ।

❋ सज्जन-दुर्जन :–

सज्जन पुरुष की मन, वचन और काया में एकता होती है,
जब कि दुर्जन पुरुष के मन में कुछ और होता है,
वचन में कुछ और होता है और
काया में कुछ और ही प्रवृत्ति होती है ।
सज्जन पुरुष जो बोलेगा -उसे निभाने की कोशिश करेगा ।
बोलना कुछ और करना कुछ इस प्रकार की विचित्रता सज्जन पुरुष में देखने को नहीं मिलेगी ।
दुर्जन पुरुष सर्प की भांति होता है-
सर्प की चमडी मुलायम होती है किंतु मुख में जहर होता है ।
दुर्जन पुरुष के मुख में मीठास होती है किंतु हृदय में तो भयंकर विष ही होता है । सावधान रहे - ऐसे दुर्जन से ।

❋ त्याग से शांति :-

जीवन में मात्र शुभ प्रवृत्ति ही पर्याप्त नहीं है, उसके साथ उसके फल की आकांक्षा का त्याग भी अनिवार्य है । सुंदर सूत्र हैं - त्यागात् शांतिः । शुभ कर्म की फलाकांक्षा के त्याग में ही शांति रही हुई है । शुभ कर्म के बाद फलाकांक्षा रखने से शुभ कर्म की फल शक्ति कमजोर हो जाती है । निराकांक्ष भाव से जो कर्म किया जाता हैं उसमें अपूर्व शक्ति पैदा होती हैं वह सकाम प्रवृत्ति में नहीं है । आकांक्षा का पाप सत्कर्म की शक्ति को नष्ट कर देता है । अतः सत्कर्म करो किंतु निराकांक्ष भाव से ।

❋ शत्रुता नष्ट करों :-

दुश्मन को खत्म करने के लिए शस्त्र चाहिये-किंतु दुश्मनाहट (वैर) को खत्म करने के लिए स्नेह युक्त मैत्री चाहिये । शस्त्र से दुश्मन का देह खत्म हो सकता हैं, किंतु दुश्मनाहट जीवित रहेगी । दुश्मनाहट-वैर वृत्ति यदि जीवंत रही तो वह दुश्मन पुनः वेष (भव) बदलकर अपने वैर का बदला लेगा । वास्तव में दुश्मन को खत्म करना है तो उसका श्रेष्ठ उपाय है - *'दुश्मनाहट को खत्म करो ।'* दुश्मनाहट-वैर वृत्ति खत्म होते ही इस दुनिया में तुम्हारा कोई दुश्मन नहीं रहेगा । तुम निर्भय होकर यत्र-तत्र-सर्वत्र घूम सकोगे ।

❋ जीवन व्यवहार :-

अपने मुंह में कठोर दांत हैं फिर भी हम उनसे परेशान नही है ।
उनकी कभी शिकायत नही करते हैं, परंतु
मुंह में घास का एक तिनका आ जाय तो
वह हमें परेशान कर देगा, वह जब तक दूर नही होगा
तब तक हमें शांति नहीं मिलेगी ।
क्योंकि दांत कठोर होते हुए भी हमारे सहायक हैं
और तिनका कोमल होते हुए भी हमें परेशान करता है ।
सामान्यतया जो हमें सहायता करते हैं,
उनसे हम मैत्री का व्यवहार करते हैं और
जो हमें परेशान करते हैं, उन्हे हम अपना दुश्मन समझते है ।
महापुरुष तो उन दोनों के बीच भी मध्यस्थ ही होते है ।

❋ विपत्ति से लाभ :-

एक अपेक्षा से संपत्ति से भी विपत्ति अधिक लाभकारी है ।
क्योंकि संपत्ति में अहंकार आने की संभावना रहती है ।
अहंकार आते ही व्यक्ति परमात्मा को
भूल जाता है । जब कि विपत्ति में परमात्मा
सहजता से याद आ जाते है ।
अपने भूतकाल की भूल का ख्याल भी विपत्ति में आता है ।
विपत्ति व्यक्ति को जागृत करती है । कुंती सदैव
प्रभु से प्रार्थना करती थी– *'विपदः सन्तु मे सदा ।'*
हे प्रभु ! मुझ पर विपत्तियाँ सदैव बनी रहे ।
क्योंकि विपत्ति में मैं आपसे निकट रहने की
कोशिश करती हूँ जब कि संपत्ति मुझे आपसे दूर ले जाती है ।

❋ रक्षण किसका ? :-

कीमती कौन ? शरीर या आत्मा ? रोड़-क्रोस करते समय
दुर्घटना न हो जाय इसके लिए सरकार चिंतित है और
इसीलिए चौराहे पर सिग्नल की पूर्ण व्यवस्था होती है ।
जानलेवा रोगों से किसी की अकाल मृत्यु न हो जाय इसके लिए
अस्पताल खुलते जा रहे हैं-परंतु खेद हैं कि
आत्मा की पवित्रता बनाए रखने एवं बचाने के लिए कोई
हॉस्पीटल या कॉलेज नहीं है ।
सरकार को शरीर के रक्षण में रस है और आत्मा की कोई चिंता
नहीं है । चरित्रहीन जीवन का क्या मूल्य है ?

❋ आस्तिक के परिवेष में नास्तिक :-

मंदिर में जाकर प्रभु के चरणों में
हजारों रुपयों के नैवेद्य चढानेवाला भक्त यदि दुकान पर आकर
मिलावट करे...धोखेबाजी करे तो एक प्रश्नचिन्ह
खड़ा होता है । एक ओर वह भक्त प्रभु को
ज्ञाननय की अपेक्षा से विश्व व्यापी मानता हैं,
और फिर मंदिर से दुकान पर आते ही
वह भगवान के अस्तित्व को भूल जाता हैं ?
मंदिर में उसी प्रभु के आगे नत मस्तक होने वाला दुकान पर
प्रभु के सामने ही बेईमानी करने के लिए तैयार
हो जाता है । दुकान पर बेईमानी करते उसे प्रभु का भी डर
नहीं लगता ? तो फिर प्रश्न उठता हैं-
उस भक्त के दिल में प्रभु का अस्तित्व स्वीकार है ?

❋ जोड़-तोड़ :-

नि:स्वार्थ प्रेम जोड़ने का काम करता है, जब कि
स्वार्थ - युक्त प्रेम तोड़ने का काम करता है ।
आज दुनिया में प्रेम तो दिखाई देता हैं किंतु
वह प्रेम स्वार्थयुक्त होने के कारण जोड़ने के बजाय तोड़ने
का काम करता है । आज घर टूटते जा रहे हैं,
परिवार टूटते जा रहे हैं, समाज टूटता जा रहा है और देश
टूटता जा रहा है । इसका एक मात्र कारण
स्वार्थ युक्त प्रेम का साम्राज्य है । आम में रस हो तब तक
उसकी कीमत । रस निकल जाने के बाद गुटली-छिलकों को
फेंक दिया जाता है । स्वार्थ युक्त प्रेम भी तभी तक,
जब तक स्वार्थ सिद्ध होता हैं ।

❋ युवा शक्ति का सदुपयोग :-

पानी को उबालने से भाप बनती है, भाप ऐसे ही पड़ी रहे तो बेकार
जाती है और उसका उपयोग करे तो उस से
बड़े-बड़े रेल्वे इंजन भी चल सकते है ।
बस, इसी प्रकार युवा शक्ति भी ऐसे ही पड़ी रहे तो
ऐसे ही नष्ट हो जाएगी और युवकों को सही दिशा प्रदान कर यदि
उस युवा शक्ति का सदुपयोग किया जाय तो
वही युवाशक्ति महान् सर्जन भी कर सकती है ।
युवकों के पास बल है, बुद्धि है ।
आवश्यकता है उन्हें सही दिशा प्रदान करने की ।
यदि सही दिशा मिल जाय तो,
इन नव युवकों का जीवन स्व पर के लिए
नंदन-वन स्वरुप बन सकता है ।

❋ वास्तविक धर्म :-

धार्मिक-क्रिया और धर्म के पालन में थोड़ा सा अंतर है ।
धार्मिक क्रिया में बाह्य प्रवृत्ति होती है
जब कि धर्म का पालन चित्त की वृत्ति रुप है ।
धार्मिक क्रिया के साथ यदि धर्म का पालन न होता हो तो
वह धर्म क्रिया सिर्फ दंभ का ही रुप होती है ।
ऐसी दांभिक क्रियाओं से जन रंजन हो सकता है,
किंतु जिन रंजन या आत्मरंजन कदापि संभव नही है ।
आज चारों ओर धार्मिक-क्रियाएँ बढ़ती हुई नजर
आ रही है किंतु धर्म पालन घटता हुआ नजर आ रहा है ।
धर्म क्रियाओं के साथ धर्म का पालन
होता हो तो सोने में सुगंध हो सकती है ।

❋ सच्ची वसीयत :-

अपनी संतान को सिर्फ धन की वसीयत तो सभी
माता-पिता प्रदान करते हैं, परंतु धन से भी अधिक
कीमती है-संस्कार । संतानो को संस्कारो का दान करनेवाले
माता-पिता ने अपनी संतानो को बहुत कुछ प्रदान किया है ।
जो माता-पिता अपनी संतान के संस्कारो की
उपेक्षा कर सिर्फ धन के ही वारिसदार बनाने की
अधिक चिंता करते है, वास्तव में वे माता-पिता अपनी
संतान के सच्चे हितैषी नहीं है । संस्कार का दान बहुत बडा
उपकार है, संस्कार-विहीन जीवन की
कीमत ही क्या हैं ? धन क्षण सुखदायी है ।
संस्कार चिर-सुखदायी है ।

❋ वाणी का संदेश :-

सरस्वती माता के हाथ में रही वीणा हमें कुछ संदेश
प्रदान करती है । वीणा के तार यदि ढीले होंगे तो उसमें से कोई मधुर
संगीत पैदा नहीं होगा और उन तारों को यदि
अधिक कस दिया तो शायद वे टूट जाएंगे ।
इसी प्रकार जीवन में अधिक तनाव भी नहीं होना चाहिये और अत्यंत
ढीलापन भी नहीं होना चाहिये । वीणा के तारों की भांति
जीवन संतुलित होना चाहिये । जीवन में अत्यंत
कठोरता होगी तो भी जीवन में से मधुर संगीत स्वरुप सामंजस्य
पैदा नहीं होगा और जीवन में यदि अत्यंत ढीलापन होगा तो भी
कुछ उपलब्धि हासिल नहीं हो सकेगी । जीवन में
कठोरता व कोमलता का सामंजस्य होना चाहिये ।

❋ नूतन वर्ष का संदेश :-

नूतन वर्ष की प्रत्येक पल में
तुम्हारे होठों पर *मैत्री भाव* का संगीत गुंजता रहे ।
तुम्हारी आंखो में *प्रमोद भाव* का प्रकाश प्रज्वलित रहे ।
तुम्हारे हृदय में *करुणा* का महासागर उछलता रहे और तुम्हारी
वाणी में सदैव *माध्यस्थ्य भाव* बना रहे । इन चार भावनाओं से
यदि अपने जीवन को ओतप्रोत बनाओगे
तो तुम्हारा जीवन अवश्य समुज्ज्वल बनेगा ।
ये चार भावनाएँ धर्म ध्यान की रसायन है ।
इनके सेवन से आत्मा पुष्ट बनती है ।
आत्मा में सुषुप्त अवस्था में पडे गुण
खिलने लगते है ।

नोट

जैन हिन्दी साहित्य दिवाकर, मरुधररत्न,
पू.आ. श्रीमद् विजय रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा.
द्वारा मुख्यतया हिन्दी भाषा में आलेखित 262 पुस्तकों में से उपलब्ध एवं अवश्य पठनीय साहित्य-सूची

Sr. No.	पुस्तक का नाम	मूल्य	Sr. No.	पुस्तक का नाम	मूल्य
1.	पंच-प्रतिक्रमण सूत्र (भाग-1)	210/-	42.	आठ कर्म निवारण पूजाएं	200/-
2.	पंच-प्रतिक्रमण सूत्र (भाग-2)	220/-	43.	तत्त्वार्थ-सूत्र-भाग-1	200/-
3.	पंच-प्रतिक्रमण सूत्र (भाग-3)	125/-	44.	तत्त्वार्थ-सूत्र-भाग-2	200/-
4.	पंच-प्रतिक्रमण सूत्र (भाग-4)	135/-	45.	सज्झायों का स्वाध्याय	100/-
5.	आओ संस्कृत सीखें भाग-1	150/-	46.	सम्यगदर्शन का सूर्योदय	160/-
6.	आओ संस्कृत सीखें भाग-2	400/-	47.	श्रमण क्रिया के मुख्य सूत्र	200/-
7.	आओ ! प्राकृत सीखें भाग-1	350/-	48.	पर्युषण अष्टाह्निका प्रवचन	120/-
8.	आओ ! प्राकृत सीखें भाग-2	300/-	49.	आओ ! पर्युषण प्रतिक्रमण करें !	150/-
9.	विवेकी बनो	90/-	50.	प्रतिक्रमण उपयोगी संग्रह	80/-
10.	प्रवचन-वर्षा	60/-	51.	मन के जीते जीत है	80/-
11.	आओ श्रावक बनें !	25/-	52.	प्रातः स्मरणीय महापुरुष भाग-1	300/-
12.	व्यसन-मुक्ति	100/-	53.	प्रातः स्मरणीय महापुरुष भाग-2	300/-
13.	श्रावक जीवन दर्शन	250/-	54.	प्रातः स्मरणीय महासतियाँ भाग-1	280/-
14.	सात वासुदेव-प्रतिवासुदेव बलदेव	50/-	55.	प्रातः स्मरणीय महासतियाँ भाग-2	300/-
15.	समाधि मृत्यु	80/-	56.	इन्द्रिय पराजय शतक	150/-
16.	Pearls of Preaching	60/-	57.	संबोह-सित्तरि (वैराग्य का अमृत कुंभ)	160/-
17.	New Message for a New Day	600/-	58.	आनन्दघन चौबीसी विवेचन	200/-
18.	Panch Pratikraman Sootra	100/-	59.	धर्म-बीज	140/-
19.	अमृत रस का प्याला	300/-	60.	45 आगम परिचय	200/-
20.	ध्यान साधना	40/-	61.	नित्य देववंदन	निशुल्क
21.	जीव विचार विवेचन	100/-	62.	श्री भद्रंकर प्रश्नोत्तरी	170/-
22.	नवतत्त्व विवेचन	110/-	63.	अध्यात्मयोगी से प्रश्नोत्तर	160/-
23.	दंडक सूत्र विवेचन	90/-	64.	कोयंबत्तुर-प्रवचन	150/-
24.	लघु संग्रहणी	140/-	65.	दक्षिण भारत प्रवचन	160/-
25.	तीन भाष्य	150/-	66.	महावीर-प्रभु की अंतिम देशना	220/-
26.	पहला कर्मग्रन्थ	160/-	67.	योग की आठ दृष्टियाँ	430/-
27.	दूसरा कर्मग्रन्थ	55/-	68.	साचा माणस बनीए ! (गुजराती)	300/-
28.	तीसरा कर्मग्रन्थ	90/-	69.	शुभ-संदेश	250/-
29.	चौथा कर्मग्रन्थ	140/-	70.	भक्ति से मुक्ति	200/-
30.	पाँचवाँ कर्मग्रन्थ	160/-	71.	सहनशील बनों (22 परीषह)	180/-
31.	छठा-कर्मग्रन्थ	210/-	72.	नवपद आराधना विधि	नवपद आराधना
32.	गणधर-संवाद	80/-	73.	शत्रुंजय की भाव यात्रा	230/-
33.	आओ ! उपधान पौषध करें !	130/-	74.	नवकार-प्रवचन	180/-
34.	विविध देववंदन	100/-	75.	10 श्रमण-धर्म	250/-
35.	भव आलोचना	10/-	76.	श्री सिद्धहेमचन्द्र-शब्दानुशासनम् (भाग:-1)	1170/-
36.	आध्यात्मिक पत्र	60/-	77.	श्री सिद्धहेमचन्द्र-शब्दानुशासनम् (भाग:-2)	1040/-
37.	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-1	125/-	78.	श्री सिद्धहेमचन्द्र-शब्दानुशासनम् (भाग:-3)	900/-
38.	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-2	175/-	79.	श्री सिद्धहेमचन्द्र-शब्दानुशासनम् (भाग:-4)	1270/-
39.	आत्म-उत्थान का मार्ग-भाग-3	150/-	80.	समाधि की साधना	300/-
40.	श्री नमस्कार महामंत्र	180/-	81.	शंका समाधान (भाग-5)	160/-
41.	परमेष्ठि-नमस्कार	180/-	82.	प्रवचन का अमृत	200/-

पुस्तक प्राप्ति स्थान : दिव्य सन्देश प्रकाशन C/o. सुरेन्द्र जैन, Office No. 304, 3rd Floor, बे व्यु बिल्डींग, विंग-ईस्ट बे, डॉ. एम.बी. वेलकर स्ट्रीट, कालबादेवी, मुंबई-400 002. M. 84 84 84 84 51 (only whatsapp)

Kamal PRINTER'S M. 9820530299